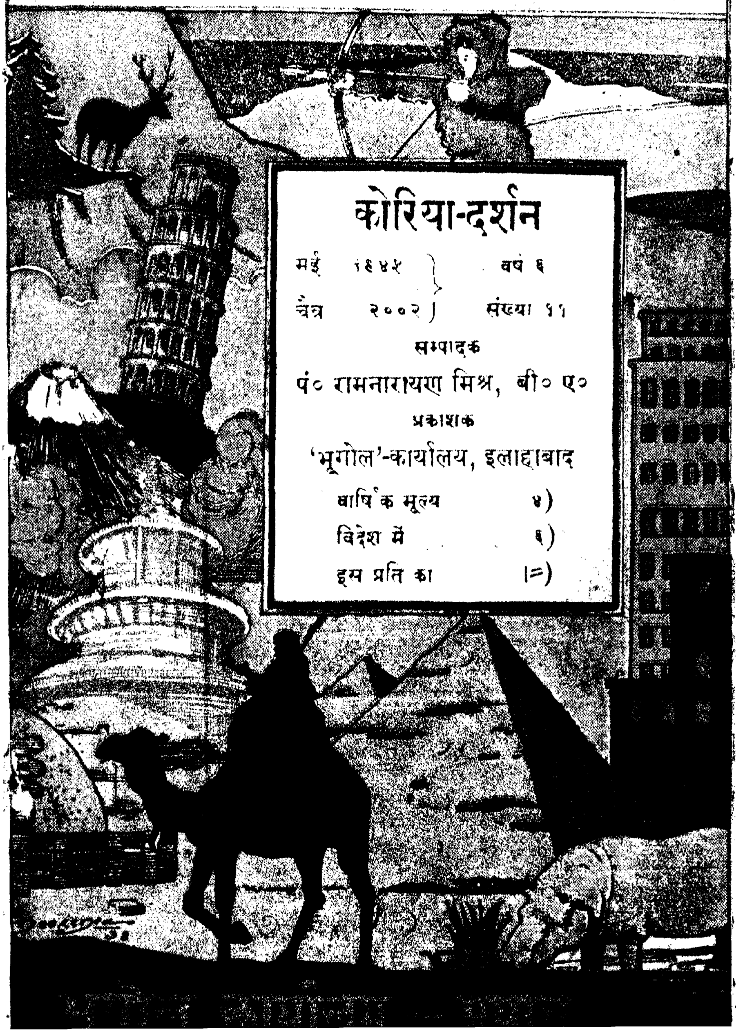
देश दर्शन

पूर्ण संख्या—६७



कोरिया-दर्शन

मई १९४५ } वर्ष ६
चैत्र २००२ } संख्या ११

सम्पादक

पं० रामनारायण मिश्र, बी० ए०

प्रकाशक

'भूगोल'-कार्यालय, इलाहाबाद

वार्षिक मूल्य	४)
विदेश में	६)
इस प्रति का	।=)

विषय-सूची

स्थिति

स्थिति सीमा, तथा विस्तार

कोरिया या चोसेन का प्रायद्वीप मंचूरिया के दक्षिण में स्थित है। चीनी भाषा में इसे चेआओ स्थान कहते हैं। चोनी प्रधान प्रायद्वीप के अतिरिक्त इसी में २०० छोटे छोटे द्वीप भी सम्मिलित हैं। यह ३४°१८ उत्तरी अक्षांश से ४३ उत्तरी अक्षांश तक फैला है। १२४°३६ और २१३०°४७ पूर्वी देशान्तर रेखायें पूर्व से पश्चिम तक इसे घेरे हुये हैं। वास्तव में कोरिया देश चोन और जापान के बोच में एक प्रकार का पैर रखने का स्थल या पुल सा बनाता है। इसके पूर्व में जापान सागर और दूसरी पश्चिम की ओर पीला सागर है। दक्षिण की ओर १२२ मील चौड़ा कोरिया जल संयोजक इसे जापान से अलग करता है। चीन का निकटवर्ती तट भी कोरिया से इतनी ही दूर है। उत्तर की ओर तूमेन और यालू नदियाँ कोरिया को मंचूकियो या मंचूरिया से अलग करती हैं। स्थल की ओर केवल ११ मील तक तूमेन नदी रूस (साइबेरिया) और कोरिया के बीच में सीमा बनाती है। शेष भाग में मंचूकुओ और कोरिया

एक दूसरे से मिले हुये हैं। उत्तर से दक्षिण तक कोरिया की अधिक से अधिक लम्बाई ६०० मील और चौड़ाई १३५ मील है। कोरिया के समुद्र तट की लम्बाई १६४० मील है। कोरिया का क्षेत्रफल ८६००० वर्गमील है। कोरिया के दो तिहाई द्वीपों में मनुष्य बसे हुये हैं। शेष वीरान आग्नेय चट्टानों के रूप में ऊपर निकले हुए हैं। इनकी ऊँचाई समुद्र तल से १०० फुट से लेकर २००० फुट तक है। क्वेलपार्ट और नानहान द्वीपसमूह अधिक प्रसिद्ध हैं। क्वेलपार्ट के पूर्वी सिरे से नानहान ३६ मील दूर है। नानहान द्वीपसमूह में पोर्ट हेमिल्टन का गहरा और सुन्दर बन्दरगाह है। यह बन्दरगाह सुनहोदान और सोदान द्वीपों के बीच में स्थित है। इन दोनों बड़े द्वीपों में अच्छी खेती होती है। कोरिया का पूर्वी तट सपाट और पहाड़ी है। इधर गहरा जल है। ज्वार भाटा १ या दो फुट ऊँचा उठता और गिरता है। पश्चिमी किनारा नीचा और दलदली है। इधर २० से ३६ फुट तक ऊँचा ज्वार भाटा होता है। कोरिया के बन्दरगाह कभी बरफ से नहीं घिरते हैं। दक्षिणी सिरे पर फूसन बन्दरगाह सर्वप्रसिद्ध है। जापान से सीधे आने वाले

जहाज यहीं उतरते हैं। दक्षिण की ओर दूसरा बन्दरगाह मसानवो है। दूसरे बन्दरगाह चुमल्यो, मोकपो, चीननाम्पो, कुन्सान और जेन्सान हैं। यह पश्चिम की ओर कोरिया का दक्षिणी पश्चिमी तट बहुत कटा फटा है। यहीं द्वीपों की संख्या भी बहुत है। प्रायः तीस फुट ऊँचे पानी के चढ़ाव उतार (ज्वार भाटा) से सुरक्षित रखने के लिए जापानी सरकार ने पश्चिमी तट पर चेमल्यो और चीनानपो बन्दरगाहों में जहाजी घाट (डाक) बना दिये हैं। क्वेलपार्ट बन्दरगाह कोरिया के दक्षिणी पश्चिमी तट से ६० मील दूर है। नानकाई द्वीप समूह कोरिया-प्रणाली में स्थित है। कांगवा द्वीप हान नदी के सामने स्थित है। स्थान स्थान पर जापानी सरकार ने प्रकाश भवन (लाइट हाउस) और तैरने वाले विशाल पीपे लगवा दिये हैं। फिर भी पथरीले टीलों से भरे हुये समुद्र में बिना अच्छे नक़शों की सहायता से जहाज़ चलाना बड़ा भयानक है। एशिया में चीन और जापान के बीच में कोरिया की वही स्थिति है जो योरुप में फ्रांस और जर्मनी के बीच में बेल्जियम की है। जैसे फ्रांस और जर्मनी के युद्ध में बार-बार बेल्जियम नष्ट हुआ वैसे ही चीन और जापान की लड़ाइयों में बार-बार कोरिया को क्षति उठानी पड़ी।

सूचना

कोरिया का उत्तरी छोटा भाग लावा से ढका हुआ पठार है। शेष बड़ा भाग पुरानी चट्टानों का बना है। चांग पाई पर्वत और इससे निकलने वाली यालू और तूमेन नदियां इस प्रदेश को मंचूरिया से अलग करती हैं। चांग पाई की विशाल पर्वतीय दीवार का ८७०० फुट ऊंचा क्रेटर (ज्वाला मुख) पाइक-तोसान है। पाइकतोसान का अर्थ लम्बा श्वेत पर्वत है। प्राचीन समय में इस ज्वालामुखी पर्वत से लावा की तहें बहीं और उन्होंने उत्तरी कैमा पठार को भर दिया। सूखने पर इनका सपाट ढाल जापान सागर की ओर हो गया। इसकी दरा की घाटी में होकर केइजो (सिउल) से नेन्सान (जेन्सान) को रेलवे जाती है। कोरिया का ¾ भाग पहाड़ी है। इस देश में मैदान का प्रायः अभाव है। उत्तरी पहाड़ी दीवार से एक पर्वत श्रेणी दक्षिण की ओर आती है। और देश को दो विषम भागों में बांट देती है। पूर्व की ओर समुद्र तट पास है। समुद्र तट और पर्वत श्रेणी के बीच में उपजाऊ भूमि है। पर यहां पहुँचना कठिन है। पश्चिम की ओर प्रधान श्रेणी से समकोण बनाती हुई कई पर्वत श्रेणियां समुद्र-तट की

ओर गई है। इन पर्वत श्रेणियों से भी अनेक पहाड़ियां निकली हैं। इन्होंने इस भाग को बहुत ही जटिल बना दिया है। इनके बीच में सपाट घाटियां हैं जिनमें बेगवती नदियां बहती हैं। दक्षिण की ओर यह पहाड़ियां नीची हो गई हैं। पर इनमें वृक्षों का अभाव है। लेकिन उत्तर की ओर पर्वत श्रेणियों और कोंगोसान या होरे का (डायमंड) पर्वत सघन वृक्षों से ढके हैं। पहाड़ियों पर छोटे वृक्ष, झाड़ियां और मोटी घास है। इस देश की अधिकांश भूमि समुद्र-तल से ५००० फुट ऊंची है। बहुत थोड़ी भूमि समुद्र-तल से १५०० फुट कम है, कोरिया की अधिकतर नदियां उथली और पथरीली हैं। उनमें समुद्र के समीप ही कुछ मीलों तक नावें चल सकती हैं। यालू या अमनोक, तूमेन, तैदोंग, नाकतोंग, मोकपो और हान नदियां अधिक बड़ी हैं। हान नदी पूर्वी तट से ३० मील की दूरी पर कांगवोन दो पर्वत से निकलती है। यह पश्चिम की ओर बहती है और कोरिया को प्रायः दो समान भागों में बाट देती है। चेमल्पो के पास यह समुद्र में गिरती है। कई स्थानों पर प्रपात होने पर भी हान नदी में १५० मील तक नावें चल सकती हैं। रेलवे के पहले चेमल्पो से सिउल तक इसी नदी द्वारा यात्रा

(नावों द्वारा) होती थी इन नदियों में केवल एक वर्षा ऋतु में ठीक ठीक पानी रहता है। इसलिये यहां की नदियां बिजली तयार करने अथवा नाव चलाने के लिये उपयोगी नहीं हैं।

तूमेन नदी श्वेत पर्वत के पूर्वी ढाल से निकलती है और उत्तर-पूर्व की ओर बहती है। ब्लाडी वोस्टक से ८० मील दक्षिण की ओर यह जापान सागर में गिरती है। तातोंग नदी पीले सागर में गिरती है। मुहाने पिंगयांग तक (जहां यह ४०० गज़ चौड़ी है) इसमें चपटी तली वाली नावें मोटर बोट और स्टीमर चल सकते हैं। रिन नदी भी पीले सागर में गिरती है। नाक तोंग नदी फूसन के पास अपने मुहाने से लेकर १०० मील भीतर की ओर नाव चलने योग्य है।

यालू कोरिया की सब से बड़ी नदी है। यह श्वेत पर्वत से निकलकर बहुत दूर तक मंचूरिया और कोरिया के बीच में सीमा बनाती है। इस नदी के पार करने पर प्रायः लड़ाइयां हुईं। बसन्त में बरफ के पिघलने और ग्रीष्म में वर्षा होने से यालू की धारा बड़ी तेज़ और पानी मटीला हो जाता है। मुहाने पर

मिट्टी और कंकड़ एकत्रित करके नदी ने एक बड़ा डेल्टा बनाया है। डेल्टा में नदी की तीन धारायें हो जाती हैं। मुहाने से चान्सोन नगर तक इसमें नावें चल सकती हैं।

खनिज—कोरिया के बहुत बड़े भाग में पुरानी बिल्लौरी चट्टानें हैं। इन्हीं में खनिज पदार्थों की अधिकता है। मंचूरिया की सीमा के पास बलुआ पत्थर कड़ी चिकनी मिट्टी और चूने का पत्थर है। यहां पुराने जीव धारियों की हड्डियां पत्थर में परिणत हो गई है। कुछ भागों में कोयला पाया जाता है। उत्तर की ओर चांगसेंग के निकट अंजाब में लोहे की खानें हैं। यहीं सोना भी पाया जाता है। सुइयान के समीप मध्यवर्ती भाग में और शोकूसान के समीप दक्षिणी भाग में सोना पाया जाता है। कांगहो से सोंग चीन तक समस्त उत्तरी भाग में ग्रेफाइट या पेन्सिल बनाने का मसाला पाया जाता है। सिउल के पृष्ठ प्रदेश और शोकूसान और चूशू के दक्षिण में भी ग्रेफाइट पाया जाता है। सोना निकालने का काम ब्रिटिश अमरीकन और फ्रांसीसी कम्पिनियों ने आरम्भ किया। लोहा और कोयला निकालने का काम जापानी कम्पिनियां करती हैं।

जलवायु

कोरिया की जलवायु बहुत ही सुन्दर और स्वास्थ्य वर्द्धक है। वर्षा दूसरे मानसूनी देशों की तरह ग्रीष्म ऋतु में होती है। उत्तरी भाग में अधिकतर वर्षा जुलाई और अगस्त महीनों में होती है। दक्षिणी तट पर अप्रैल से जुलाई तक वर्षा होती है। साल भर की वर्षा का औसत ३६ इंच है जो अपने इलाहाबाद की वर्षा के समान है। अधिकतर वर्षा (२१ इंच) वर्षा ऋतु में होती है। वर्षा में अपने इलाहाबाद से समानता होने पर भी यहां का तापक्रम कहीं कम है। सिउल का जुलाई तापक्रम ७५ अंश फारेन हाइट और जनवरी तापक्रम ३३ अंश रहता है। यह तापक्रम अपने काश्मीर और दूसरे पहाड़ी स्थानों से मिलता जुलता है। शीत-काल में प्रायः हिम वर्षा होती है। चेमल्पो बन्दरगाह में दिसम्बर से फर्वरी तक हिम वर्षा होती है। लेकिन जापान सागर पीला सागर अपना इतना अच्छा प्रभाव डालते हैं कि यह बरफ अधिक समय तक भूमि पर नहीं पड़ी रहती है और कोरिया के सभी बन्दरगाह शीतकाल में खुले रहते हैं। धूप भी बहुत रहती है और बड़ी सुहावनी होती है। ग्रीष्म ऋतु में समुद्र की ओर

से आने वाली गीली हवायें यहां के तापक्रम को बड़ा मृदुल बना देती हैं। पर शीत काल में बरफ से ढके हुये स्थल की ओर से आने वाली हवायें इतनी ठंडी होती हैं कि यात्री की हड्डी तक ठंडी कर देती हैं। औसत से समस्त देश का तापक्रम एक महीने के लिये हिम बिन्दु से नीचा गिर जाता है। दक्षिणी भाग में शीतकाल में एक महीने से कुछ कम समय तक ३२ अंश फारेन हाइट से कम तापक्रम रहता है। सिउल और मध्यवर्ती भाग में २ महीने तक और मंचूरिया की सीमा के पास प्रायः तीन महीने तक शीत काल में ३२ अंश फारेन हाइट से कम तापक्रम हो जाता है। यहीं देश भर में सबसे अधिक समय तक बरफ जमी रहती है।



वनस्पति

कोरिया की प्राकृतिक वनस्पति वन है। देश ठंडा होने से यहां देव देवादार, अखरोट, बांझ आदि पेड़ होते हैं जो अधिक शीत सह सकते हैं। प्रकृति ने इस देश को ऐसा बनाया है कि इसकी ७० फीसदी भूमि वन से ढकी होती है। पर दक्षिण और मध्यवर्ती भागों में जलाने और दूसरे कामों के लिये इतने अधिक वृक्ष नष्ट कर दिये गये कि यहां प्रायः उजाड़ भूमि है। फूलने वाली झाड़ियां और लतायें सब कहीं मिलती हैं। यहां की घास कुछ कड़वी है इसलिये यहां बकरियों की कमी है। पहाड़ों पर जंगली हिरण बारह सिंगे और तेंदुआ पाया जाता है। चीता न केवल निचली घाटियों में वरन् ऊँचे वर्फीले भागों में भी पाया जाता है। कभी कभी यह झोपड़ों में घुसकर स्त्री या बच्चे को उठा ले जाता है। जिन भागों में चीता रहता है वहां रात्रि में चलना बन्द हो जाता है। आवश्यकता पड़ने पर कुली यहां मशाल जलाते हुये और चिल्लाते हुये रात्रि में चलते हैं। जापानी बन्दूकों ने आजकल इसे बहुत कम कर दिया है। एक वर्ष जेन्सान के बन्दरगाह से ५०० चीतों की खालें बाहर भेजी गईं।

कोरिया-दर्शन

कृषि

कृषि—कोरिया का ⅘ भाग पर्वतीय है। पहाड़ी चोटियों पर कुछ भी खेती नहीं होती है। पहाड़ी ढालों पर साधारण खेती होती है। क्यारियां अधिक उपजाऊ हैं। इनमें धान की खेती होती है। सोयाबीन, गेहूँ, मटर, जौ, कपास, तम्बाकू, जिन्सेंग, ज्वार, बाजरा और रेंडी दूसरी फसलें हैं। जिन्सेंग की जड़ औषधि के काम आती है और अधिकतर चीन को भेजी जाती है। भात और दाल यहां के लोगों का प्रधान भोजन है। कोरिया में लगभग सवा करोड़ एकड़ भूमि खेती के काम आती है। डेढ़ करोड़ एकड़ भूमि बन से घिरी है। जो भाग पहले वीरान हो गये थे, उनमें नये वृक्ष लगाये जा रहे हैं। सेव आदि फलों के बगीचे भी बढ़ रहे हैं। अनुकूल पत्तियों की अधिकता होने से रेशम भी तयार होने लगा है। खेत जोतने का काम विशाल बैलों से लिया जाता है। कोरिया वासियों के खेत प्रायः छोटे हैं। खेती अधिकतर पुराने ढंग से होती है। जापानियों ने कुछ स्थानों पर नये ढंग के बड़े फार्म खोले हैं। सिंचाई की सुविधा हो जाने से खेती की भूमि बढ़ गई है।

चीन की भांति यहां की मिट्टी बालू से मिली हुई कुछ पीली और हल्की है। कुछ भागों में लावा की मिट्टी है। नदियों के मुहाने के समीप पानी के साथ बह कर आई हुई कछारी कांप है। कोरिया को छूने वाले समुद्रों में मछलियाँ बहुत हैं। कोरिया वासी पुराने ढंग के जालों से समुद्र के उथले भागों में मछलियां पकड़ते हैं। गहरे भागों में नये ढंग से जापानी लोग मछलियाँ पकड़ते हैं।

कोरिया नगर गांवों का देश है। जैसे बड़े बड़े शहर चीन और जापान में बसे हुये हैं उनका इस देश में अभाव है केवल कुछ छोटे छोटे नगर हैं।

सिउल इस देश का सबसे बड़ा नगर है। इसकी जनसंख्या प्रायः चार लाख है। इसमें एक लाख जापानी हैं। सिउल शब्द का अर्थ राजधानी है। नगर का ठीक नाम हानयांग या हान का दुर्ग है। हान नदी के किनारे पर यहां पहले भी नगर था। १३६५ में कोरिया के राजवंश ने यहां अपनी राजधानी बनाई। सिउल नगर देश का प्रायः भौगोलिक केन्द्र है। यह ५०० मील लम्बी और ३ मील चौड़ी घाटी में स्थित है। नगर

पहाड़ों से घिरा हुआ है। निर्मल आकाश होने पर वे एक दम पास दिखाई देते हैं। पहले यह नगर २५ फुट ऊँची और चौदह मील लम्बी चार दीवारी से घिरा था। इस समय यह कुछ टूट गई है। कहते हैं विशाल पत्थरों की इस चार दीवारी को बनाने में १,६८,००० मनुष्यों ने पहले एक महीना फिर ८०,००० मनुष्यों ने दूसरे महीने काम करके इस चारदीवारी को पूरा किया। इस चार दीवारी में ८ विशाल फाटक हैं। रात को लकड़ी के विशाल फाटक बन्द हो जाते हैं। शहर भी अधिकतर छोटे हैं और खपरैलों से छाये हुये हैं। कहीं कहीं विशाल भवन हैं। विदेशियों के दूतावास और सरकारी भवन बड़े हैं। कुछ घर लकड़ी और कागज़ के बने हैं। राजमहल बहुत सा स्थान घेरे हुये है। कहीं कहीं पेड़ों की हरियाली है। नालियां गन्दी हैं। चारदीवारी के फाटकों से आने वाली सड़कें चौड़ी हैं। इनमें एक सड़क १०० फुट चौड़ी और ३ मील लम्बी है। शेष भागों में १२ फुट चौड़ी गलियां हैं। सिउल नगर चेमल्पो बन्दरगाह से सड़क द्वारा २६ मील दूर है। लेकिन हान नदी के मोड़दार जल-मार्ग द्वारा यह चेमल्पो से ५५ मील दूर है। जापानी लोग चेमल्पो को

जिन्सान कहते हैं। सिउल नगर समुद्र तल से १२० फुट ऊँचा है। पर पहाड़ियों से घिरा होने से ऐसा मालूम होता है मानों हथेली के ऊपर अंगुलियां खड़ी हों। नान सान चोटी सबसे अधिक ऊँची है। सूर्यास्त के बाद पहले यहां थोड़ी देर के लिये आग का उजाला कर दिया जाता था। इसी संकेत को दूसरी चोटियों पर भी दुहराया जाता था। इससे राजा को कुछ ही देर में पता लग जाता था कि सारे राज्य में यह दिन शान्ति से बीत गया। आजकल सब कहीं तार है।

भिन्न भिन्न वस्तुओं की बिक्री प्रायः भिन्न-भिन्न बाजारों में होती है। अनाज के बाजार की सड़क चौड़ी है। यहां प्रायः आध मील तक दुकानों में चावल की चौड़ी टोकरियां चावल, बाजरा, सोआ, बीन आदि अन्न से आधी भरी मिलेंगी। एक सड़क पर बढ़ई लोग अपना सामान बनाते और बेचते हैं। एक सड़क पर गुदड़ी बाजार है। एक पर कपड़ा बेचने वाले बैठते हैं। सुनार अपना सोना चांदी का जेवर नहर के पड़ोस में बेचते हैं।

सड़कों पर रेकशा, लकड़ी लादे हुये बैल ऊँची

(कुरसी पर बिठाकर यात्री को ले जाने वाले) कुली, घोड़ा गाड़ी और मोटर मिलेंगे। प्रायः सभी लोग सफेद स्वच्छ कपड़े पहने हुये दिखाई देंगे। फिर भी नगर में गरीबी का राज्य है। अच्छा भोजन और गरम फर्श (क्योंकि यहां जाड़ा अधिक पड़ता है) कोरिया वासियों के लिये सब कुछ है। चार दीवारी के बाहर बगीचे, गांव, पेड़ों से ढकी घाटियां, पहाड़ियां और खेत हैं।

पर पुराना नगर बहुत कुछ बदल गया है सड़क अधिक चौड़ी हो गई हैं। घर एक ढांचा के अनुसार नियत दूरी पर बनने लगे हैं। धुआं निकलने के लिये उनमें चिमनी लग गई हैं। सिउल में कई दर्शनीय स्थान हैं। यहां का विशाल कांसे का घंटा संसार भर में तीसरे नम्बर का है। पांच सौ वर्ष तक विशाल फाटकों को खोलने और बन्द करने के लिये यह घंटा बजता रहा। कुछ छोटे छोटे घंटे मन्द हवा में स्वयं बजते हैं और बहुत मधुर लगते हैं। चार दीवारी के बाहर शहर की विशाल रेलवे स्टेशन है। एक ओर जापानी मुहल्ला बस गया है। सिउल से ५० मील उत्तर-पूर्व की ओर सोंगदो नगर है। ६६० से १३६२ ई० तक यही

नगर कोरिया देश की राजधानी रहा। यह सिउल से जिन्सान को जाने वाली रेलवे लाइन पर पड़ता है।

फूसन से १०० मील उत्तर की ओर तैकू नगर दक्षिणी कोरिया में एक प्रान्त की राजधानी है। दक्षिणी पूर्वी कोरिया में अन्दोंग नगर कनफूशान-विद्वानों के लिये प्रसिद्ध है। अधिक उत्तर-पूर्व की ओर अत्यन्त सुन्दर प्राकृतिक दृश्य के बीच में कांगकाई नगर स्थित है।

हान नदी के मुहाने पर पूर्वी तट पर बसा हुआ चेमल्पो बन्दरगाह पहले मछली पकड़ने वालों का एक छोटा गांव था। यहां केवल १५ झोपड़े थे। १८८२ ई० में यह विदेशी व्यापार के लिये खोल दिया गया। तब से यह सिउल का बाहरी द्वार बन गया। सीधी सड़क से सिउल यहां से केवल २६ मील दूर है। कुछ छोटे द्वीप इस बन्दरगाह की रक्षा करते हैं। यहां ३२ फुट ऊँचा ज्वार आता है। पर जब पानी लौटता है तो कहीं कहीं तली की कीचड़ दिखाई देने लगती है। १९११ में जापानियों ने कई लाख रुपये खर्च करके यहां सुन्दर जहाज़ी घाट बना दिये। ४५०० टन भार वाले जहाज दीवार के पास लंगर डाल सकते हैं। यहाँ पानी की

गहराई २६ फुट है। ऊपर जहाज से बोझा उठाने वाले और लादने वाले क्रेन (यन्त्र) हैं। १८६४ ई० में यहीं जापानियों ने चीनियों का एक जहाज डुबा कर सिउल पर चढ़ाई की थी। यहीं १६०४ ई० में उन्होंने रूसियों के दो जहाज नष्ट किये थे। जापानी मुहल्ला तेज़ी के साथ बढ़ कर बहुत बड़ा हो गया। फूसन बन्दरगाह रेल द्वारा सिउल (राजधानी) से जुड़ा हुआ है। रेल मार्ग कृषि प्रदेश में होकर गया है। यहां धान, गेहूँ, जौ, ज्वार बाजरा के खेत हैं। बीच बीच में पहाड़ियां हैं। फूसन से सिउल तक पहुँचने में रेलगाड़ी को २० घंटे लगते हैं। यहां बाढ़ या भूकम्प का प्रकोप नहीं होता है। फूसन की स्थिति बड़ी सुन्दर है। बन्दर गाह भीतर की ओर पहाड़ियों से घिरा हुआ है। व्यापारी मुहल्ला आकर्षक नहीं हैं। नगर के समीप फलों के पेड़ हैं। पहाड़ियों पर देवदारु के बृक्ष हैं। जापान पहुंचने के लिये फूसन कोरिया का निकटतम बन्दरगाह है। यहां से शिमोनोसेकी (जापान) पहुँचने में २० घंटे लगते हैं। यहां से जापान के लिये प्रतिदिन जहाज़ आया जाया करते हैं। एक पहाड़ी चोटी पर शिन्तो समाधियां हैं। चोटी तक पहुँचने के लिये पत्थर की

सीढ़ियां बनी हैं। कुछ भक्त लोग ऊपर जाकर घंटा बजाते हैं प्रार्थना करते और तरह तरह की भेंट चढ़ाते हैं कुछ लोग टोपी उतार कर दूर से ही प्रणाम कर लेते हैं।

प्योंग यांग तातोंग नदी के किनारे चेमल्पो बन्दरगाह से ३५ मील दूर है। नगर नदी के ऊँचे किनारे पर स्थित है। नगर की दीवार से टेढ़ी चाल से बहने वाली नदी, घाटी और पहाड़ियों का सुन्दर दृश्य दिखाई देता है। इस नगर को अब से ३ हज़ार वर्ष पूर्व कोरिया के महापुरुष किचा राजा ने बसाया था। यह उत्तरी कोरिया का प्रधान नगर है। यहाँ के लोगों का विश्वास है कि नगर एक नाव पर बसाया गया था। १८६४ में चीन जापान युद्ध में इस नगर के बहुत से घर नष्ट हो गये थे। बचे हुये घरों को विजयी जापानियों ने लूट लिया और घरों की लकड़ी से ईंधन का काम लिया। इस युद्ध के पूर्व यहाँ ८०,००० निवासी थे। युद्ध के पश्चात् यहां केवल १५००० मनुष्य रह गये। इसके बाद यहां की जनसंख्या फिर बढ़ी। नगर के बाहर रेलवे स्टेशन है। पड़ोस में जापानी बारकें और बंगले हैं। यहीं अमरीकन

मिशनरियों के बड़े बंगले हैं। यहाँ की दूकानों में तरह तरह का सामान रहता है। सूखी मछलियां बड़े सुन्दर ढंग से पंक्तियों में लटकाई जाती हैं। टोपियों की दुकानें भी बड़ी सुन्दर लगती हैं। टोपियां कई प्रकार की होती हैं। प्रायः सभी टोपियां ठुड्डी के नीचे काले डोरे से बांध ली जाती हैं। सफेद वस्त्रों के ऊपर काली या रंगीन टोपी सुहावनी लगती है। टोपी प्रायः घोड़े के बालों की बनाई जाती है। नगर के बाहर एक पहाड़ी पर युद्धदेव (भैरव) का मन्दिर बना है। देवदारु के बन के बीच में सम्राट किचा जी की समाधि है। ईसा से ११२२ वर्ष पूर्व चीन से आकर किचा जी ने कोरिया के राज्य की नींव डाली थी। उसके राजवंश ने १००० वर्ष तक यहां राज्य किया।

जेन्सान नगर सिउल से १७० मील उत्तर-पूर्व की ओर पूर्वी तट पर स्थित है। जिस खाड़ी पर जेन्सान स्थित है उसे द्वीपों और अन्तरीपों ने सुरक्षित बना दिया है। बन्दरगाह २० मील लम्बा है और २ मील से ६ मील तक चौड़ा है। यह संसार के सर्वोत्तम बन्दरगाहों में से एक है। इसकी गहराई १२ गज से ४८ गज़ तक है। यह रूस के व्लाडीवोस्टक बन्दरगाह से कोरिया

का निकटतम बन्दरगाह है। जापान सागर से उत्तरी कोरिया के व्यापार का यह प्रधान द्वार है। यहां विदेशियों की संख्या तेज़ी से बढ़ी। इनमें जापानी मुहल्ला सबसे अधिक बड़ा है। यहां बैंक, चुङ्गी घर स्कूल आदि हैं। यहां से चीन और जापान को नियत समय पर जहाज़ छूटा करते हैं। यहाँ से एक रेलवे लाइन सिउल को गई है। बीजू नगर यालू नदी के मुहाने के पास सदियों तक कोरिया और चीन का द्वार रहा। यहाँ और पेकिंग के बीच में बराबर आना जाना रहा। नगर के पास यालू नदी पर रेल का पुल बन जाने से कोरिया मंचूरिया और साइबेरिया के बीच में आना जाना बहुत बढ़ गया। पहले यह मछली पकड़ने वालों का एक छोटा गाँव था। आज कल यह बड़ा व्यापारिक नगर बन गया है। मुकडन से आने वाली रेलवे के लिये कोरिया का यह पहला नगर यहीं पड़ता है।



कोरिया की एक कहानी

एक रात को एक चीता शिकार की खोज में एक गांव में घुसा। वह उस अस्तबल में पहुँचा और एक कोने में जा छिपा जहां एक नई घोड़ी बँधी थी। इसी घोड़ी को चुराने के लिये अस्तबल के दूसरे कोने में एक चोर छिपा था। दोनों इस प्रतीक्षा में थे कि घर वाले सो जावें तभी घोड़ी ले चलें। इतने में बच्चा रो पड़ा! मां ने बच्चे से कहा मत रोओ चीता छिपा है। चीते को आश्चर्य हुआ कि मां उसे कैसे ताड़ गई। पर बच्चा रोता ही रहा। फिर उसने बच्चे से कहा यहां कोकम कोकम है चुप हो जाओ यह सुन कर बच्चा चुप हो गया। तब तो चीता भी डरा कि मुझसे भी अधिक भयानक कौन जन्तु है जिसका नाम सुन कर बच्चा चुप हो गया। कुछ ही समय में घर के सब लोग सो गये। चोर रस्सी लेकर टटोलता हुआ घोड़ी की ओर बढ़ा! कोने में छिपे हुये चीते को घोड़ी समझ कर चोर ने उसी की गर्दन बाँध ली और बाहर खींच कर उसकी पीठ पर सवार हो गया। चीता चोर कोकम समझ कर चुपचाप था। चोर चीते को घोड़ी समझ कर

अँधेरे में तेज़ चला रहा था। जब चोर अपने गांव के पास पहुंचा और कुछ उजाला हुआ तब गांव वालों ने इस चोर को चीते पर सवार देखा। इस समय तीनों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। चोर चीते की पीठ से कूद कर गाँव वालों की ओर इस प्रकार चला मानों वह प्रतिदिन चीते की सवारी करता हो। चीता अपनी लाज बचाने के लिये दौड़ कर झाड़ी में जा छिपा। उस दिन से इस मनुष्य का बड़ा आदर होने लगा।

(२)

एक बार कोरिया की सुदूर घाटी में एक बुड्ढा और बुढ़िया रहते थे। उनके दांत गिर गये थे। उनके कोई सन्तान न थी वे दोनों बड़े निर्धन थे। उनको अपना जीवन बड़ा दुःखमय प्रतीत होता था। शीतकाल की रात्रि में उनके झोपड़े के ऊपर बरफ छाई हुई थी और बहुत ही ठंडी आंधी चल रही थी। बाजरा के पतले दालिया का भोजन समाप्त करके वे पीतल की अँगोठी में रक्खे हुये अधबुझे कोयलों पर अपनी सुन्न अँगुलियों को सेंक रहे थे। सब कहीं सन्नाटा था। केवल पहाड़ी ढालों पर कुत्ते भूँक रहे थे। कुछ देर मौन

रहने के बाद बुड्ढे ने कहा–शीतकाल धनी लोगों के लिये बड़ा सुहावना समय होता है। उन्हें पहले ही से तयार भोजन मिलता है। दूसरे लोग उनके लिये परिश्रम करते हैं। वे आनन्द से अपना जीवन बिताते पर निर्धनों के लिये यह बड़ा भरावनां समय होता है। इसमें उन्हें न तो मुँह में डालने के लिये अनुकूल भोजन मिलता है और न हाथ गरम करने के लिये ईंधन मिलता है। यदि वे हिम या वर्षा में बाहर पहाड़ों पर काम करने जाते हैं तो वे ठंड से मर जाते हैं। बुढ़िया ने उत्तर दिया कि लोग कहते हैं; ईश्वर न्यायकारी है। फिर संसार में ऐसी बातें क्यों होती हैं। यदि ससार में हमारी इच्छायें पूरी होती रहें तो यह संसार कितना सुहावना हो। कुछ लोगों का कहना है कि यदि हम प्रार्थना करते रहें तो हमारी इच्छायें पूरी हो सकती हैं। अतः वे दोनों प्रार्थना में लग गये। इतने में एक देवदूत उनके सामने प्रगट हुआ। उसने क्रुद्ध कर कहा–तुमने पाप अवश्य किया है फिर भी ईश्वर ने तुम पर दया की है सोच 'विचार कर तुम तीन वरदान मांग सकते हो यह कह कर देवदूत छिप गया। बुड्ढा आश्चर्य और आनन्द में मग्न हो गये। फिर वे यह सोचने लगे कि

कौन से तीन वरदान मांगे जायँ। बुड्ढे (चुंग) ने सोचा धन, रोग से छुटकारा और दीर्घायु यह तीन वरदान माँगे जायँ। पर बुढ़िया ने कहा यदि हमारे कोई बच्चा न हो तो हम इन वस्तुओं का आनन्द नहीं ले सकते। पर केवल ३ वरदान मिलेंगे इस लिये कौन सी वस्तु छोड़ी जाय। इसी बीच में बुड्ढे को नींद आने लगी। बुढ़िया ने आग टाल कर हाथ सेंकते हुये कहा हमें १ गज ऊँचा हलुआ सदा मिलता रहे तो कैसा अच्छा हो। उसके मुख से यह शब्द निकलते ही उसके समीप १ गज़ ऊँचा हलुआ उपस्थित हो गया। इस वरदान को देख कर बुड्ढा क्रोध से लाल हो गया उसने बुढ़िया से कहा तुम कैसी मूर्ख हो कि एक ही बात से तुमने हम लोगों के स्थायी लाभ का नाश कर दिया। मैं चाहता हूँ कि इसका तुम्हें यह दंड मिले कि हलुआ सदा तुम्हारी नाक तक लगा रहे। यह कहते ही हलुआ उछल कर बुढ़िया की नाक तक पहुंच गया। इससे बुढ़िया को बड़ा कष्ट होने लगा। हलुआ छुड़ाते छुड़ाते उसकी नाक लाल पड़ गई। अन्त में उसने प्रार्थना की कि इस बोझे से मुझे शीघ्र ही छुटकारा

मिले। उसकी इच्छा पूरी हुई हलुआ लुप्त हो गया। बुड्ढा और बुढ़िया पूर्ववत् हो गये। दूसरे दिन उन्हें एक अनाथ बालक मिला। उसको पालने से उनका जीवन सुखमय हो गया।

जापानी शोगुन हिदेयोशी की कोरिया पर चढ़ाई

जिस समय भारतवर्ष में अकबर का राज्य था तभी जापान के शोगुन (राजा) हिदेयोशी ने कोरिया पर चढ़ाई करने का निश्चय किया। इस समय कोरिया में फूट और कमज़ोरी थी। हिदेयोशी के पास इस समय एक शक्तिशाली और अनुभवी सेना थी। हिदेयोशी इसे अलग नहीं करना चाहता था। पर बिना काम इतनी बड़ी सेना का रखना भी सम्भव नहीं था। अतः उसने चीन पर चढ़ाई करने की योजना बनाई। पर चीन पहुँचने के पूर्व कोरिया मार्ग में पड़ता था। अतः उसने सर्व प्रथम कोरिया विजय करने का निश्चय किया। उसने कोरिया के राजा के पास राजदूत भेजे

और कहला भेजा कि मैं चीन विजय करना चाहता हूँ अतः मेरा साथ दो अथवा मेरी सेना को अपने देश में होकर जाने दो। कोरिया के राजा ने उत्तर दिया कि चीन और कोरिया का सम्बन्ध पिता पुत्र अथवा बड़े और छोटे भाई का रहा है। इसलिये यह सम्भव नहीं है कि कोरिया चीन के विरुद्ध कार्य करे। १५६२ ई० में हिदेयोशी ने ढ़ाई लाख सेना कोरिया जीतने के लिये भेजी। इस सेना में ५००० फरसाधारी थे। एक लाख सिपाहियों के पास लम्बी तलवारें थीं। इनके अतिरिक्त १ लाख छोटी तलवारें और ५ लाख भाले थे। इनसे भी अधिक भयानक ३ लाख बन्दूकें थीं। ५०,००० घुड़सवार थे। कोरिया वासियों के पास एक भी बन्दूक न थी। न वे इतनी बड़ी सेना एकत्रित कर सकते थे। कोरिया ने चीन से सहायता मांगी थी पर वहां से भी तुरन्त आवश्यक सहायता न मिल सकी। कोरिया में इतने समय तक शान्ति रही कि वहाँ के सैनिकों को लड़ने का अभ्यास छूट गया था। जापानी सेना ने उतरते ही फूसन, तोंगना, किमहा और दूसरे नगरों पर अधिकार कर लिया। फिर वह कोरिया की

राजधानी सिउल की ओर बढ़ी। जापानी सेना इतनी अधिक थी उतने अधिक भोजन को उसे आवश्यकता थी कि उसके लिये एक मार्ग से बढ़ना सुगम न था। वह तीन टोलियों में विभक्त होकर राजधानी की ओर बढ़ी। कोनोशी की सेना मध्यवर्ती मार्ग से आगे बढ़ी। सेनाध्यक्ष काटो की सेना कुछ पूर्व की ओर हट कर उत्तर ओर बढ़ी। सेनापति कुरोदा की सेना पश्चिमी मार्ग से आगे बढ़ी। इस विशाल सेना का समाचार पाते ही सिउल में खलबली मच गई। चारिपुंग (पक्षी) दर्रे के पास कोरिया की असंगठित सेना कुछ सामना कर सकती थी। पर यह सेना यहाँ से पीछे हट आई। जापानी आगे बढ़े। कोरिया का राजा राजधानी छोड़कर भाग गया।

कुनोशी की सेना हान नदी के पास सबसे पहले पहुँची पर जापानियों के पास नावें न थीं। अतः यहाँ कुछ रुकावट हुई। फिर भी जापानी लोग राजधानी में पहुँच गये। इसी बीच में कोरिया का राजा तादोंग नदी को पार करके प्येंगयाँग में पहुँच गया।

राजधानी में पहुँच कर जापानी लोग आमोद प्रमोद में लग गये। इससे चीन को तयारी करने का अवसर मिल गया। कोरिया के लोग भी जग गये वे सेना

तयार करने लगे। जापानी सेना प्रबल होने पर भी घर से दूर थी। रसद का सामान कोरिया से ही इकट्ठा किया जाता था। जो जापानी सिपाही बीमारी अथवा अन्य कारण से मर जाते उनका स्थान लेने के लिये जापान से दूसरे सिपाही नहीं आ सकते थे।

जापान से रसद और सेना को कोरिया में आने से रोकने का काम कोरिया के वीर और देशभक्त जल सेनापति यीसुन सिन ने किया। वह न केवल कोरिया वरन् संसार का वीर योद्धा गिना जा सकता है। दक्षिण की ओर कोरिया की जल सेना का आधिपत्य ग्रहण करके उसने कछुये के आकार के एक विचित्र लोहे से जड़े हुये जहाज का आविष्कार किया। इसकी पीठ पर लोहे की चद्दरें जड़ी थीं। इस पर शत्रु की गोली का असर नहीं होता था। कच्छपाकार इस अकेले जहाज से उसने जापान से रसद और ६०,००० सेना लाने वाले जापानी बेड़े का सामना किया। वह छोटी छोटी जापानी नावों पर दायें बायें सामने सभी ओर टूट पड़ता और उन्हें नष्ट कर देता अथवा डुबा देता। कुछ ही समय में जापानी जल सेना में गड़बड़ी मच गई। इनके ऊपर

वह अग्नि बाण छोड़ता था। आग लगने से प्रायः समस्त जापानी बेड़ा नष्ट हो गया। केवल कुछ नावें जापान में इस भीषण सन्देश को पहुँचाने के लिये बचीं। इस घटना से युद्ध का रूप ही बदल गया। जापानी सेना प्योंगयांग में अवश्य पहुंच गई थी। कोरिया के राजा को उत्तरी सीमा के पास भागना पड़ा था। पर जापानी सेना के घर से दूर होने और रसद न मिलने से बड़ी चिन्ता होने लगी। जापानी सेनापतियों में आपस में फूट भी थी। इस समय कोरिया और चीन की संयुक्त सेना प्योंगयांग के सामने आ गई। जापानी सेना रात्रि के अँधेरे में दक्षिण की ओर सिउल को भाग गई। इससे पहले ही कोरिया वासियों ने आक्रमण कारियों के छक्के छुड़ा दिये थे। घर से सहायता मिलने की कोई आशा न देखकर जापानियों ने संधि कर ली। जापानियों ने तट के पास लौट जाने का अवसर दिया गया। कहा जाता है कि उन्होंने चीनी सेनापतियों को अपनी ओर मिला लिया था। दक्षिणी तट के किलों में सुरक्षित होकर जापानी सिपाही २ वर्ष तक डटे रहे। कोरिया बासी छापामार लड़ाई करने लगे। अन्त में १५९६ ई० में जापानी सेना को कोरिया छोड़कर घर

जाने की आज्ञा मिल गई। अब तक कोरिया के जल सेनापति यीसुनसिन ने जापान के १ लाख ८० हज़ार सिपाही डुबा दिये थे। सभी जापानी उसके नाम से थर्राते थे। लड़ाई से डर दूर होने पर कोरिया के सेनापति आपस में लड़ने लगे। प्रारम्भ की भूल का दोष वे एक दूसरे पर मढ़ने लगे। अच्छे लोग सेना छोड़ कर चले गये। अथवा मार डाले गये।

घर पहुंच कर जापानियों ने अपने मार्ग के प्रधान रोड़े जल सेनापति यीसुन-सिन को करने का एक उपाय सोचा। उन्होंने एक कोरिया वासी अपनी ओर मिला लिया था। अब वह जापान से एक महत्वपूर्ण सन्देश लेकर आया। उसने कोरिया वासियों को बतलाया कि एक प्रबल जापानी बेड़ा कोरिया पर चढ़ाई करने फिर आ रहा है। यदि जल सेनापति यीसुनसिन कुछ द्वीपों के बीच में जाकर इसे रोकें तो कोरिया की रक्षा हो सकती है। यह स्थान बड़ा भयानक था। पर राजा ने यहीं जाने के लिये यीसुनसिन को आदेश दिया। यीसुनसिन ने कहा वहां नावों को ले जाना भयावह है। जापानियों

का सामना कोरिया के तट के पास भली भांति किया जा सकता है। यीसुनसिन के विरोधियों ने उस पर देशद्रोह का अपराध लगाथा। जब दूसरी बार भी उसने अपनी जल सेना को वहां ले जाकर संकट में डालने से इनकार किया तब वह अपने पद से हटा दिया गया। उसने चुपचाप राजा की आज्ञा मान ली। जब जापानियों को पता लगा कि यीं सुनसिन अपने पद से हटा दिया गया तो उनके जहाज तुरन्त कोरिया पर चढ़ाई करने के लिये चल पड़े। कोरिया की जल सेना एक निकम्मे सेनापति की अध्यक्षता में थी। यह जल सेना बिना लड़े ही भाग गई। १५९७ ई० में दूसरी बार जापानी सेना कोरिया के तट पर उतर गई। इस बार कोरिया वासी भी बन्दूक चलाना जान गये थे। उनकी छोटी छोटी टोलियां जापानी सेना पर छापा मारने लगीं एक जापानी सेना पश्चिमी मार्ग से सिउल की ओर बढ़ी। पर चिकसान के पास कोरिया और चीन की संयुक्त सेना ने इसे बुरी तरह हराया। इसके बाद जापानी सेना सिउल (राजधानी) की ओर तो फिर नहीं बढ़ी। लेकिन लड़ाई चलती रही। कुछ भागों में लड़ाई इतनी मन्द पड़ गई कि जापानी सिपाही खेती

करने में लग गये। १५६८ ई० में जापानियों को देश से भगाने का फिर प्रयत्न किया गया। योसुनसिन फिर जल सेनापति बनाया गया। जापानी सेना कोरिया को छोड़ कर घर जाने के लिये आतुर थी। जापानियों ने चीनी सेनापतियों को भी रिश्वत देकर अपनी ओर मिला लिया। पर योसुन को रिश्वत देकर मिलाना असम्भव था। उसने प्रायः समूची जापानी सेना को समुद्र में डुबा दिया। इस युद्ध में वह स्वयं भी लड़ता हुआ मारा गया। पर उसने अपने देश को बचा लिया। कुछ समय बाद जापान और कोरिया में बराबरी की व्यापारिक सन्धि हो गई। जापानी व्यापारी फूसन में अपना सामान लाने लगे। चिकनी मिट्टी के बर्तन बनाने वाले कोरिया के कुछ कारीगर जापान में जाकर बस गये इससे जापान के इस कारबार की नींव पड़ी।



संक्षिप्त इतिहास

कोरिया के अति प्राचीन मूल निवासियों के विषय में ठीक ठीक पता नहीं चलता है। वे नष्ट हो गये अथवा वर्तमान निवासियों में मिल गये। कोरिया के वर्तमान निवासी मंचूरिया की ओर से आये। फिर भी कोरिया का इतिहास बहुत पुराना है। इसका चीन से घनिष्ट सम्बन्ध रहा। ईसा से १२०० वर्ष पूर्व महाराज कित्से या किजा का यहां आगमन हुआ। यह बड़े विद्वान और सदाचारी थे। यह चीन के सम्राट चौसिन के प्रधान मन्त्री थे। शांगवंश का यह अन्तिम सम्राट बड़ा निर्दयी और दुष्ट था। कित्से ने उसे सुधारने का प्रयत्न किया। पर सम्राट ने रुष्ट होकर कित्से के मित्रों को मार डाला और कित्से को कैद कर लिया। अन्त में देश में विद्रोह हुआ। चौसिन के राज्य का अन्त हो गया। बू वांग राजा हुआ। उसने कित्से को जेल से छुड़ा कर उसे फिर प्रधान मन्त्री बनाना चाहा। कित्से अत्याचार सहने पर भी चौसिन को ही राज्य का अधिकारी समझता था। बू वांग राज्य का अधिकारी न था अतः कित्से ने बू वांग का प्रधान मन्त्री होना स्वीकार नहीं किया। अतः ५००० अपने अनुयाइयों को लेकर ईसा

से ११२२ वर्ष पूर्व कित्से ने उत्तर-पूर्व की ओर प्रस्थान किया और वहां एक नये साम्राज्य की नींव डाली। आरम्भ में उस राज्य में दक्षिणी मंचूरिया का देश शामिल था। फिर इसमें कोरिया का देश मिल गया। जिस समय कित्से कोरिया देश में आये उस समय यहां के मूल निवासी खोहों में रहते थे। ईसा से २०० वर्ष पूर्व चीन के हानवंशीय राजा ने कित्से के उत्तराधिकारी कोरिया के राजा से युद्ध छेड़ दिया। वह युद्ध कई पीढ़ी तक चला। कभी कोरिया कभी चीन की विजय हुई। अन्त में ईसा से १०७ वर्ष पूर्व कोरिया द्वीप चीनी साम्राज्य में मिला लिया गया। राज्य छिन जाने से कित्से का राज वंश सवासौ वर्षों में विलीन हो गया। प्येंग यांग में एक पहाड़ी पर सम्राट कित्से की समाधि बनी है। समाधि एक सुन्दर कुन्ज के बीच में बनी है। पास ही सड़क पर एक विज्ञापन लगा है कि ऐसे पवित्र स्थान पर घुड़सवार को घोड़े से उतार कर पैदल चलना चाहिये। सम्राट कित्से ने इस देश में ऐसे समय पर सभ्यता फैलाई जब एथेन्स एक छोटा गांव था। रोम का पता न था और योरुप में जंगल था। कित्से ने देश

के लिये उपयोगी कानून बनाये। आगे चल कर मंचूरिया की सुंगारी नदी के उत्तर से कोरई, शिनरा और हियाकसई लोग यहां आ बसे। कई सौ वर्ष तक कोरिया का इतिहास नेताओं के पारस्परिक युद्धों अथवा इनसे और चीन से युद्धों का इतिहास रहा। सातवीं शताब्दी तक कोरई लोगों ने जापान सागर से लयाओ नदी तक अपना प्रभुत्व कर लिया। राज्य के पांच प्रान्तों में लाखों मनुष्य रहते थे। यहां १७६ शहर थे। अन्त में चीन ने इस वंश को दबा दिया। हियाकसई लोगों ने इस देश में शिक्षा फैलाई। उन्हीं के समय में महात्मा कनफुत्से मेत्से के उपदेशों (लेखों) का प्रचार हुआ। पांचवीं शताब्दी में कोरिया ने चीन की सेना को हराया। पर छठी शताब्दी में चीन की फिर विजय हुई और यह देश चीन के राज्य का अङ्ग बन गया। कुछ समय तक शिनरा लोगों ने कोरिया में बड़ी उन्नति की। उन्होंने देश में किले बनाये और नगरों को चारदीवारी से घिरवाया। वे घोड़ों और बैलों से काम लेते थे। वे कच्चे लोहे को गला कर शुद्ध करते थे और लोहे से तरह तरह की चीज़ें तयार करते थे। वे रेशम के कपड़े बना लेते थे।

वे जापान और दूसरे देशों से व्यापार करते थे। वे पूर्वी कोरिया में शासन करते थे। अन्त में इस वंश में फूट फैली और ९३४ ई० में इसका अन्त हो गया इनका राज्य चीन ने मिला लिया। नवीं, दशवीं शताब्दी में मङ्गोलिया और मंचूरिया की ओर से कीतन जाति के लोग आये। इन्होंने पुहाई राजवंश को नष्ट करके इसकी राजधानी किरीन नगर पर अधिकार कर लिया। पुहाई लोग हार कर उत्तरी कोरिया की उजड़ी हुई घाटियों में आ बसे। इसी समय राजा वांगकेन ने समस्त कोरिया पर अधिकार करके सुन्तो (कैसेंग) में राजधानी बनाई। ९४५ ई० में राजा वांगकेन की मृत्यु हो गई। पर जिस राज्यवंश की उसने नींव डाली उसने यहां चार शताब्दी तक राज्य किया। सुन्तो नगर धन धान्य, विद्या और कला-कौशल का केन्द्र बन गया। १३९२ ई० में यह राज्य नष्ट हो गया।

तेरहवीं शताब्दी (१२०६) में मङ्गोलिया की ओर से बढ़ कर चिंगेज खां की सेनाओं ने कोरिया देश पर भीषण आक्रमण किया। १२१८ ई० में कोरिया का राजा चिङ्गेज़ खां को कर देने लगा। १२३१ ई० में मङ्गोल

राजदूत मार डाला गया। इससे दूसरी बार मङ्गोलों ने कोरिया पर चढ़ाई करके और भी अधिक मार काट की। चिङ्गेज़ खां और उसके पौत्र कुबलई खां को जापान पर चढ़ाई करने में सफलता न मिली। इस लिये कोरिया पर भी उनका शासन अधिक समय तक न रहा।

वांग वंश के अन्तिम राजा ने बड़ा बुरा शासन किया लोग बिगड़ खड़े हुये इसी समय उसने चीन के सेनापति नी तैजोको रुष्ट कर दिया। १३६२ में उसने कोरिया पर चड़ाई की और कोरिया का राजा हो गया। नये राजा ने हान यांग में राजधानी बनाई जो सिउल कहलाने लगा। राजा ने राजधानी के चारो ओर एक चारदीवारी बनवाई। जापान के आने तक इसी राजवंश ने कोरिया पर राज्य किया। जापान के प्राचीन आक्रमण का वर्णन अलग किया गया है। प्राचीन कोरिया में भारतवर्ष के समान वर्ण व्यवस्था तो न थी पर समाज कई पेशों में बँटा था। राजवंश, अमीर (सरदार) सरकारी कर्मचारी, विद्वान किसान और कारीगर प्रधान पेशे थे। कारीगरों में सौदागर, मल्लाह (नाव चलाने वाले) जेलर, डाकिया,

भिक्षु, कसाई और जादूगर नीच गिने जाते थे। कसाई एक दम निकृष्ट माने जाते थे। राजा ईश्वर का अंश माना जाता था। उसका शरीर बड़ा पवित्र समझा था। लोहा राजा के शरीर को कभी नही छूने पाता था। कहते हैं १८०० ई० में कोरिया का राजा चेंग जोंग फोड़े से मर गया पर उसके (लोहे) के नश्तर से फोड़ा चीरा नहीं गया। महल के सामने कोई सवार होकर नहीं जा सकता था। सब को महल के सामने पैदल चलना पड़ता था।

१८६४ ई० में अल्पवयस्क राजा कोरिया की गद्दी पर बैठा। शासन भार मन्त्रियों के हाथ में था। १८७३ ई० में वह बालिग हुआ। फिर भी शासन में कोई विशेष सुधार न हुआ। इसी समय विदेशी लोग कोरिया में अपना प्रभुत्व बढ़ाने के लिये तरह तरह के उपाय करने लगे। १८०० ई० से यहां विदेशी मिशनरियों ने घुसने का प्रयत्न किया। कोरिया वासी आरम्भ से ही इन मिशनरियों के विरुद्ध थे। वे नहीं चाहते थे कि उनके देश वासी अपना प्राचीन धर्म छोड़ कर ईसाई बन जावें। जब १८७१ ई० में अमरीका के एक जल

सेनापति ने कोरिया के साथ सन्धि करनी चाही तो कोरिया की सरकार ने उत्तर दिया। "कोरिया को अपनी ४००० वर्ष की पुरानी सभ्यता से पूरा सन्तोष है उसे किसी दूसरी सभ्यता की आवश्यकता नहीं है।" कोरिया की नीति पश्चिमी लोगों से दूर रहने की थी। पर यह लोग कोरिया में प्रवेश करने के लिये आतुर थे। दैवयोग से १८६६ में कुछ फ्रांसीसी पादरियों की यहां हत्या हो गई। यह लोग भेष बदल कर कोरिया में घुस आये थे। इसका बदला लेने के लिये तुरन्त ही फ्रांस का जङ्गी जहाज़ कोरिया पर चढ़ आया। उसे यहां कोई विशेष सफलता न मिली और कुछ क्षति पहुंचा कर वह लौट गया। इसी समय रूसी लोग कोरिया में व्यापारिक सुविधायें चाहते थे। एक अमरीकन जहाज कोरिया के तट के सामने डूब गया। कोरिया के सरकारी कर्मचारियों ने इसके मल्लाहों के साथ बड़ा अच्छा व्यवहार किया। उनके भोजन आदि का प्रबन्ध करके उन्हें चीनी सीमा के पास पहुंचा दिया गया यहां से वे न्यूचांग चले गये जहां एक अमरीकन राजदूत रहता था। इसी वर्ष (१८६६ ई० में) एक दूसरा अमरीकन जहाज २ महीने बाद अगस्त मास

में बिना आज्ञा लिये तातोंग नदी के ऊपर चल कर प्योंगयांग आ पहुँचा। यहां चट्टानों से टकरा गया। कोरिया वासियों की भीड़ इसे देखने के लिये जहाज के पास पहुँच गई। कुछ लोग जहाज के ऊपर चढ़ गये। अमरीकन मल्लाहों और भीड़ से मुठभेड़ हो गई। जहाज़ की तोप छीन ली गई और मल्लाह मार डाले गये जहाज़ डुबा दिया गया।

१८६७ ई० में यहां कुछ जर्मन, फ्रान्सीसी और अमरीकन सोने की खोज में आये। वे समझते थे कि राजाओं की कब्रों में अपार सोना पड़ा है। अतः उन्होंने यहां पहुँच कर कई कब्रों को खोद डाला। इन गोरे लुटेरों को सोना तो न मिला, पर उन्होंने कई समाधियों (कब्रों) को भ्रष्ट कर दिया और कोरिया की जनता को रुष्ट कर दिया। १८७१ में अमरीकन बेड़ा दंड देने के लिये आया। कुछ वर्षों में कोरिया की एकाग्रता दूर हो गई। १८८२ में अमरीका से १८८३ में जर्मनी से १८८४ में रूस और इटली से १८८६ में फ्रांस से और १८६२ में आस्ट्रिया हंगारी से कोरिया की सन्धि हो गई।

कोरिया-दर्शन

चीन-जापान-प्रतिस्पर्धा—कोरिया और चीन का सम्बन्ध पुराना है। यह राजर्षि कित्से के समय से आरम्भ होता है। चीन से ही कोरिया को कन्फुत्से धर्म मिला। बौद्ध धर्म भी भारत वर्ष से चीन-मार्ग द्वारा ही कोरिया में पहुंचा था। कोरिया का राजा नियमित रूप से चीन के दरबार पेकिंग में कर भेजता था। जब कभी चीनी सम्राट कोरिया को जाता तो कोरिया का राजा सम्मान पूर्वक राजधानी के बाहर आकर उसका स्वागत करता था। पर १८६६ ई० में फ्रान्सीसी सरकार ने जब कोरिया में मारे गये फ्रान्सीसियों के लिये भारी हरज़ाना मांगा तो चीन ने स्पष्ट कह दिया कि कोरिया एक स्वाधीन राज्य है। फिर भी कोरिया की राजधानी में स्थित चीनी राजदूत का बड़ा प्रभुत्व था।

जापान को चीनी प्रभुत्व खटकने लगा। १८६६ ई० में कोरिया के राजा ने फ्रान्सीसियों से डर कर जापान से सहायता मांगी। पर जापान ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। वह योरुपीय लोगों से झगड़ा मोल लेना नहीं चाहता था। भाग्य से कोरिया वासी अकेले ही सफल हो गये उन्होंने रोमन केथलिक मिशन को अपने देश से बाहर कर दिया। पर १८६८ में जापान

में एकता बढ़ने से शक्ति भी बढ़ी। उसी वर्ष जापान ने अपना प्रभुत्व स्वीकार करवाने की दृष्टि से कोरिया में अपना राजदूत भेजा। कोरिया ने जापान की मांग को स्वीकार न किया। इस से जापान में रोष तो फैला पर तुरन्त लड़ाई छिड़ने से टल गई। जापानी सरकार विदेशी युद्ध से बचना चाहती थी अतः उसने यह रोष चुपचाप पी लिया। १८७५ ई० में जापान ने कोरिया को फिर अपना करद राज्य बनाने का प्रयत्न किया। इस बार भी कोई फल न हुआ। इसी वर्ष १ सितम्बर मास में एक जापानी जहाज़ ने अपने कुछ मांझी पानी लेने के लिये कांगवा के पास उतारे। फ्रांसीसी या अमरीकन समझ कर कोरिया के सिपाहियों ने इन पर गोली चला दी। इस पर जापानियों ने किले पर छापा मारा और किले के सिपाहियों को नष्ट कर डाला। जापान ने कुछ कूटनीतिज्ञ चीन (पेकिंग) को यह जानने के लिये भेजे कि इस मामले में चीन क्या जिम्मेवारी लेता है। साथ ही ६ जनवरी १८७६ ई० में जापान ने ८०० सुसज्जित सैनिक सेनापति कुरोदा के साथ कोरिया को भेजे। चीनी सरकार ने कोई जिम्मेवारी नहीं ली

और कोरिया की सरकार को सम्मति दी कि वह जापान से सन्धि कर ले। १८७६ ई० के फरवरी मास में जापान से संधि हो गई। इस संधि के अनुसार जापान ने कोरिया को स्वाधीन राज्य मान लिया। फूसन, चेमल्पो और जेन्सान के बन्दरगाह जापानी व्यापार के लिये खुल गये। कोरिया में एक जापानी मन्त्री रहने लगा। इस संधि से जापान को सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि इसमें चीन कोई प्रभुत्व कोरिया पर नहीं दिखायेगा। तीन महीने बाद जब कोरिया का राजदूत जापान को गया तो मिकाडो के दरबार में उसका बड़ा शानदार स्वागत हुआ। इससे कोरिया पर जापान का प्रभाव बढ़ गया। १८८२ ई० में फिर एक सन्धि हुई। इसके अनुसार कोरिया में रहने वाले जापानियों की रक्षा के लिये जापान को कोरिया में एक सेना रखने की आज्ञा मिल गई। तब से एक जापानी सेना कोरिया की राजधानी में रहने लगी। १८८२ से एक चीनी सेना भी कोरिया में रहने लगी थी। स्वयं कोरिया में कोई शक्तिशाली सेना न थी। अतः इस समय से कोरिया में अपना २ प्रभुत्व स्थापित करने के लिये चीन और जापान की मुठभेड़ होने की आशंका बढ़ गई। क्षणिक

मुठभेड़ को बचाने के लिये १८८५ ई० में चीन और जापान में सन्धि हो गई कि दोनों हो अपनी अपनी सेनायें कोरिया से बुला लें। यदि भविष्य में किसी संकट के समय दोनों में से किसी को कोरिया में सेना भेजने की आवश्यकता पड़े तो भेजने वाला राज्य दूसरे को लिखित सूचना पहले भेज दे। इस से खुल्लम खुल्ला युद्ध तो न छिड़ा) पर गुप्त षडयन्त्र चलते रहे। १८९४ ई० में एक विद्रोह को दबाने के के लिये कोरिया के राजा ने चीन से सैनिक सहायता मांगी। चीन ने कोरिया के आसान बन्दरगाह पर २००० सिपाही उतार दिये और जापान को सूचना दी कि चीन अपने करद राज्य में शान्ति स्थापित करने के लिये सेना भेज रहा है। जापान कोरिया को चीन का करद राज्य मानने से इन्कार कर दिया और साथ ही १०,००० सैनिक चेमल्पो बन्दरगार में उतार दिये। इन्होंने सिउल (राजधानी) पर अधिकार कर लिया। इसके उत्तर में चीन ने और अधिक सेना और एक जहाज़ कोरिया को भेजा। सन्धि चर्चा फिर चलने लगी पहले यह निश्चित हुआ कि दोनों देशों की सेनायें कोरिया के

बाहर चली जावें। पर जापान ने राजमहल पर अधिकार करके राजा को कैद कर लिया। और राजा के पिता को शासन भार सौंप दिया। समुद्री लड़ाई में जापान ने चीन के तीनों लड़ाका जहाज़ नष्ट कर दिये फिर आसान की चीनी सेना को घेर लिया। १८९४ ई० की पहली अगस्त को चीन और जापान में युद्ध घोषित हो गया। चीन पुराना विशाल साम्राज्य था। पर यह कुछ खोखला सा हो गया था। भले लोग सेना में भरती नहीं होते थे। सेना में निर्धन और असहाय लोग जाते थे। इनके पास प्रायः बांसों में बँधे हुये भाले थे। कुछ बन्दूकें पुराने ढंग की थीं। इनके सेनापति छाता और पंखा लेकर युद्ध क्षेत्र में जाते थे। जापान की सेना में जोशीले विद्यार्थी थे जिन्होंने योरुपीय सैनिक शिक्षा प्राप्त की थी। इन सब के पास नये ढँग के अस्त्र शस्त्र थे। प्योंग यांग के रणक्षेत्र में चीनी सेना ढोल और नगाड़े बजाती हुई आगे बढ़ी। पर जापानियों की गोलियों की वर्षा में रणक्षेत्र रक्त से लाल कर दिया। ५००० से ऊपर चीनी सैनिक मारे गये। चीन का प्रधान सेनापति स्वर्ग गति को प्राप्त हुआ। शेष सेना में भगदड़ मच गई। इस युद्ध से जापान को ल्योटंग प्रायद्वीप और

पोर्टआर्थर बन्दरगाह मिल गया। चीन को युद्ध का हर्जाना देना पड़ा और कोरिया को स्वतन्त्र राज्य मानना पड़ा।

कोरिया के लिये रूसी ज़ार का प्रयत्न

ज़ारशाही रूस को एक ऐसे बन्दरगाह की बड़ी आवश्यकता थी; जो सरदी में बरफ से न जमे और साल भर खुला रहे। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये ज़ार ने प्रशान्त महासागर के उत्तरी भाग में पहुँचने के लिये साइबेरिया को अपने साम्राज्य में मिलाया था। फिर १८९१ ई० में साइबेरिया को पार करने वाली ५४२६ मील लम्बी ट्रान्ससाइबेरियन रेलवे का श्री गणेश हुआ। १९०२ ई० में यह विशाल फौलादी लाइन बन कर प्रायः तयार हो गई। इस लाइन के मार्ग में ४०० मील लम्बी ४० मील चौड़ी ३१८५ फुट गहरी और समुद्र तल से १५६१ फुट की ऊँचाई पर स्थित मीठे पानी की बैकाल झील बाधा डालती थी। वर्ष में सरदी के पांच महीने तक इस झील का ऊपरी धरातल ९ फुट

मोटी बरफ से जम जाता है। आरम्भ में रूसी लोगों ने इसे पार करने के लिये बरफ तोड़ कर चलने वाले हिमविध्वंसक (आइस ब्रेकर) जहाज़ों का पयोग किया। झील के दक्षिणी किनारे पर सपाट पहाड़ी २०० मील लाइन पूर्ण की। इस २०० मील लाइन को बनाने में ३३ सुरंग बनाने पड़े पर १९०४ ई० में यह लाइन बन कर तयार हो गई। पर व्लाडी वोस्टक बन्दरगाह के लिये चक्करदार मार्ग अमूर नदी के किनारे के पास होकर जाता था (सीधा मार्ग अमूर) के दक्षिण मंचूरिया में होकर था जो चीन के अधीन था। १८९६ ई० में संयुक्त नियन्त्रण के आधार पर रूस ने चीन से मंचुरिया होकर लाइन निकालने की सुविधा प्राप्त कर ली। इससे रूस का इस प्रदेश में बड़ा प्रभाव बढ़ गया। शीघ्र ही सुंगारी नदी के किनारे पर एक रूसी उपनिवेश बस गया जो हार्विन नगर के नाम से प्रसिद्ध हो गया। यह नगर गेहूँ पैदा करने वाले और विशाल चरागाह वाले उपजाऊ प्रदेश का केन्द्र है। १८९८ ई० में हार्विन से दक्षिण की ओर पोर्टआर्थर को एक शाखा लाइन खोलने की चीन से सुविधा मिल गई।

व्लाडी वोस्टक ग्रीष्म काल में एक सुन्दर सतह

और प्राकृतिक बन्दरगाह होने पर भी सरदी के ६ महीनों में बरफ से घिर जाता है। यह प्रशान्त महासागर के तट पर स्थित है। यहां से बाहर जाने के लिये केवल तीन जल-मार्ग हैं। लापेरूज या सोया प्रणाली यहां से ५०० मील उत्तर पूर्व की ओर सारवालिन द्वीप और यजो (होकैडो) द्वीप के बीच में है। ४२० मील पूर्व की ओर तक यजो सुंगारू प्रणाली येजो और हांडो द्वीप के बीच में स्थित है। कोरिया प्रणाली ६०० मील दक्षिण की ओर है। कोरिया प्रणाली १२० मील चौड़ी है पर सुशीमा द्वीप ने इसे दो भागों में बांट दिया है। एक ओर यह एकदम जापान से घिरी है। इस प्रकार जापान सागर वास्तव में जापान का सागर है। इसके प्रायः सब ओर जापान का प्रभुत्व है। बिना जापान की इच्छा से कोई विदेशी जहाज़ यहां नहीं आ जा सकता।

अतः रूस ने दक्षिण की ओर पीले सागर में पहुंचने का प्रयत्न किया। इसी बीच में १८६४ ई० में चीन-जापान युद्ध छिड़ गया। विजयी जापान ने पोर्ट आर्थर पर अधिकार कर लिया। पहले यह मछुओं

एक छोटा गांव था। जर्मन इंजीनियर इसका सैनिक महत्व एक दम ताड़ गये। उन्हीं की सम्मति से चीन ने यहां मज़बूत किला बनवाया। १८९५ में शिमोनोसेकी की सन्धि के अनुसार कोरिया तो स्वतन्त्र मान लिया गया पर ल्याओटंग प्राय द्वीप फारमूसा और पेस्कडोर्स द्वीप जापान को मिले। इसी समय जर्मनी फ्रांस और रूस ने मिल कर जापान को सूचना दी कि यह उचित न होगा कि जापान, चीन के प्रधान स्थल पर स्थायी अधिकार करे। १८९६ में रूस को मंचूरिया में होकर न केवल रेल निकालने, खनिज खोदने, व्यापार करने और रक्षा के लिये सेना रखने का अधिकार मिल गया। १८९८ ई० में रूस ने चीन से २५ वर्ष के पट्टे पर ल्याओ टंग प्राय द्वीप मांगा जिसमें पोर्ट बन्दरगाह और समीपवर्ती ८०० वर्ग मील का प्रदेश शामिल था। १८९८ के मार्च मास में यह भूमि रूस को मिल गई। तुरन्त ही २०,००० रूसी सिपाही यहां आ गये और ६०,००० चीनी कुली पोर्टआर्थर को किलेबन्दी के काम में लग गये। पोर्ट आर्थर किलेबन्दी के लिये अच्छा है पर व्यापार के लिये अच्छा बन्दरगाह नहीं है। अतः रूसियों ने यहां से ३३ मील उत्तर पूर्व को ओर एक

नया व्यापारिक नगर बसाया और उसका नाम डालनी रक्खा। डल्नी बन्दरगाह बड़ा सुन्दर है। भाटा (पानी के उतार) के समय भी यहां समुद्र ३२ फुट गहरा रहता है। जहाज़ तट पर आकर अपना सामान एक दम रेल के डब्बों में लाद सकते हैं। दक्षिण-पूर्व की ओर से आंधी आने पर जहाजों को लंगर डालने में कठिनाई होती है। यहां ब्रेक वाटर बनाया गया। सामान रेल द्वारा योरुप के देशों को जा सकता है। १८९९ में एक छोटे चीनी गांव को छोड़ कर और कुछ न था। १९०३ में यहाँ विशाल गोदामें, एलीवेटर, बिजली, ट्रेमकार, नल आदि सभी सुविधा की चीज़ें हो गईं। इस नये शहर में चार भाग थे। एक भाग में शासन प्रबन्ध सम्बन्धी इमारतें थीं। दूसरा भाग व्यापारी था। तीसरे भाग में रहने के लिये सुन्दर बँगले थे। चौथे भाग में चीनी मुहल्ला था। चार वर्ष में यहां ५०,००० जन संख्या हो गई। इस नये नगर के निर्माण में ७५०,००,००० रुपये खर्च हुये। १९०० ई० में बाक्सर विद्रोह होने पर रूस ने न्यूचांग में नई सेना भेज कर मंचूरिया पर अधिकार कर लिया। १९०२ के सन्धि

के अनुसार रूस ने मंचूरिया खाली करने का वचन दिया। १८९६ में कोरिया को कर्ज देने के सम्बन्ध में रूस ने जापान से समझौता किया। शीघ्र ही सिउल में स्थित रूसी मन्त्री ने कोरिया की सेना को रूसी अफसरों के नियन्त्रण में करने का प्रयत्न किया। इस समय कोरिया का अर्थ मन्त्री एक अँग्रेज़ था। रूस ने उसे हटाने और रूसी मन्त्री रखने का प्रयत्न किया। १८९८ के अप्रैल मास में रूस और जापान में सन्धि हुई जिसके अनुसार दोनों देशों ने कोरिया को स्वतन्त्र माना और निश्चय किया कि दोनों देशों में से कोई वहां ८०० से अधिक सिपाही न रक्खे।

इस संधि के अनुसार रूस कोरिया में खुल्लम खुल्ला आक्रमण न कर सका। पर अपने मित्र फ्रान्स की सहायता से रूस अपने उद्देश्यों की पूर्ति में लग गया। फ्रांस को योरुप में अपनी रक्षा और एशिया में अपने साम्राज्य विस्तार के लिये रूस से बड़ी आशा थी। अतः कोरिया में फ्रान्स ने रूस का साथ दिया। कोरिया के प्रायः सभी उच्च सरकारी पदाधिकारी फ्रांसीसी बना दिये गये। कोरिया का राजा फ्रांस और रूस की कठ-पुतली बन गया। एक फ्रांसीसी कम्पिनी को यालू नदी

के किनारे पर स्थित बीजू से सिउल तक रेलवे लाइन खोलने का अधिकार मिल गया। फ्राँन्स के रोमन कैथलिक पादरी (जिन्होंने देश के भिन्न-भिन्न भागों में गिरजों और स्कूलों का जाल फैला दिया था) फ्रांस के राजनीतिज्ञों का साथ दे रहे थे। कोरिया की एक स्त्री की सहायता से रूसियों ने रानी को भी अपनी ओर कर लिया। जो लाइन बीजू से सिउल को खुलने वाली थी वह रूस के लिये बड़ी उपयोगी थी। उस उत्तरी द्वार से रूसी सेना सिउल में आ सकती थी। पर जापानी लोग भी चुपचाप न थे। उन्होंने कोरिया को बार बार स्वतंत्र घोषित किया और कोरिया वासियों को सेना में भरती करके उन्हें ड्रिल सिखाते थे। और यथा सम्भव सभी सरकारी पदों पर जापानियों को नियुक्त करते थे। जब रानी रूस की ओर हो गई और जापानी योजनाओं में बाधा डालने लगी तो जापानियों ने राजा के पिता तैवेनकुन को अपनी ओर फोड़ लिया। वह रानी का कट्टर शत्रु था। अक्तूबर १८९५ में उन्होंने तैवेनकुन के द्वारा रानी को मरवा डाला। राजा पर जापानी दल का आतंक छा गया उसे अपनी हत्या का

सदा डर रहने लगा। रूसी और कोरियावासी दल ने उसे बचाने का प्रयत्न किया। महल के भीतर दो औरतें भेदिया का काम करती थीं। अन्त में चार महीने की एक प्रकार की कैद के बाद राजा और युवराज छिप कर रूसी दूतावास में चला गया। वहां वह एक वर्ष तक रूसी राजदूत का अतिथि रहा। रूसी दूतावास एक प्रकार से कोरिया की राजधानी बन गया। एक संधि से रूसी कम्पिनी को तूर्मेन नदी (मूसन जिले में) और उइनुंग द्वीप (जापान सागर) में लकड़ी काटने का अधिकार मिल गया। यह निश्चित हुआ कि राजा को लाभ का ¼ भाग राजा को मिले। १६०० ई० में राजा ने सोना निकालने (हामग्योंग्डोसे) और दक्षिणी तट से ह्वेल मारने का अधिकार रूस को दे दिया। यालू नदी की घाटी में लकड़ी काटने के साथ साथ रूसी कम्पिनी ने बारकें भी बनवा लीं। पर कोरिया जल संयोजक के पहरेदार मसाम्पो बन्दरगाह को लेने में रूसी लोग सफल न हो सके। यहां अधिकार हो जाने से दक्षिणी कोरिया पर प्रभुत्व हो जाता। पर इसे जापान ने पहले ही मोल ले लिया।

चीन जापान युद्ध के समय से ही यह स्पष्ट हो गया

था कि कोरिया पर प्रभुत्व स्थापित कने के लिये जापान को रूस से लड़ना पड़ेगा। इसके बाद की घटनाओं और रूस-जापान के षड्यन्त्रों से तो भावी युद्ध में कोई सन्देह न रहा।

जापान ने इस युद्ध के लिये पूरी तयारी की। उसने अपने होनहार विद्यार्थी जहाज़ बनाने और चलाने की कला सीखने के लिये इङ्गलैंड को भेजे। सेना सम्बन्धी शिक्षा ग्रहण करने के लिये जापानी विद्यार्थी जर्मनी को पहुंचे। नये ढङ्ग के बढ़िया से बढ़िया हथियार जापान में तेज़ी से बनने लगे। जापानी लोग बहुत पहले से ही कोरिया में जाने लगे थे। १९०२ ई० से जापानियों को कोरिया जाने के लिये पासपोर्ट (राहदारी) ले जाने की आवश्यकता न रही तब से कोरिया में उनकी संख्या और अधिक बढ़ गई। कोरिया में भूमि उपजाऊ थी। रहन-सहन जापान की अपेक्षा कहीं अधिक सस्ता था। अतः जापान से बहुत से लोग आकर कोरिया में बसने लगे। प्रायः २०० जापानी प्रति दिन कोरिया में बसने के लिये आने लगे। बड़े-बड़े मुहल्लों में जापानी मुहल्ले बस गये। अधिकतर जापानी व्यापारी थे। इन स्थानों

में जापानी स्कूल अलग थे। उनकी कचहरी और पुलिस भी अलग थी। जब कोरिया के समाचार पत्र कोरिया डेलीन्यूज़ के अँग्रेज़ सम्पादक ने इसका विरोध किया तो टोकियो के समाचार पत्र ने लिखा कि जापान में सब लोगों के लिये पर्याप्त भोजन नहीं है। प्रति वर्ष ५ लाख जनसंख्या बढ़ती है। यदि अमरीका, या आस्ट्रेलिया या संसार के किसी भाग में हम अपनी बढ़ती हुई जनसंख्या को भेज सकें तो हमें कोरिया में भेजने की आवश्यकता न हो। हम जानते हैं कि कोरिया देश अधिक घना बसा है। पर कोरिया में सब से कम विरोध है। आस्ट्रेलिया प्रायः खाली है। पर वहां अँग्रेज़ लोग और अमरीका में अमरीकन लोग गोरों के अतिरिक्त दूसरी जाति वालों को नहीं जाने देते। युद्ध के पूर्व भी जापान कोरिया से गेहूँ, चावल, सोयाबीन और खली मोल लेता था और बदले में सूत, दियासलाई, कोयला और तम्बाकू बेचता था। युद्ध के पूर्व ४०,००० जापानी कोरिया के तट पर मछली मारने का काम करते थे। १८८८ ई० में जापान ने तार की लाइन फूसन से सिउल तक पूरी कर ली थी। उन्हें इन दो नगरों के बीच में रेल निकालने का

भी अधिकार मिल गया था। अधिकतर बैंक जापान के हाथ में थे। इनमें जापानी नोट चलते थे। कोरिया का बहुत कुछ व्यापार जापान के हाथ में था। १९०१ ई० में फूसन से रेल का बनना आरम्भ हुआ। १९०४ में यह लाइन बन कर तयार हो गई। इस रेलवे लाइन के बन जाने से यात्री ५५ घन्टे में रेल-स्टीमर और फिर रेल यात्रा समाप्त करके टोकियो से सिउल पहुँचने लगा। जापान ने सिउल से इसके बन्दरगाह चेमल्पो तक भी २६ मील लम्बी रेलवे लाइन १९०० ई० में बना डाली। उन्होंने कोरिया में खनिज खोदने की भी सुविधा प्राप्त कर ली। मसाम्पो में जापानी उपनिवेश रूसी योजनाओं को विफल करने में लग गया। अन्त में दोनों ओर से युद्ध की पूरी तयारी हो गई।

रूसो-जापानी युद्ध

१९०४ ई० की ६ फर्वरी को जापान ने रूस से राजनैतिक सम्बन्ध तोड़ लिया और सेंट पीटर्स बर्ग से अपना राजदूत बुला लिया। ७ फर्वरी को

मसानपो बन्दरगाह पर अधिकार करके जापान ने सेना का उतारना आरम्भ कर दिया। ८ फर्वरी को जापानी जहाज़ी बेड़ा चेमल्पो बन्दरगाह के सामने पहुँचा। जापानी सेनापति ने रूस के २ जहाज़ों को बाहर आने का आदेश दिया। रूस के दोनों जहाज़ लड़ते हुये नष्ट हो गये। जापान की कोई क्षति नहीं हुई। इसी रात्रि को जापानी जल सेनापति टोगो पोर्टआर्थर के सामने अचानक पहुँचे। २ रूसी युद्ध पोत और एक क्रूज़र नष्ट कर दिये गये। दूसरे दिन ९ फर्वरी को दिन के समय जो युद्ध हुआ उसमें जापानियों ने १ रूसी युद्ध पोत और ४ क्रूज़र फिर नष्ट कर डाले। इस युद्ध में रूसी जहाजी बेड़ा ऐसा लंगड़ा हो गया कि उसने भागकर पोर्टआर्थर के बन्दरगाह में शरण ली। इस युद्ध में जापान की केवल दो टार्पीडो नावें नष्ट हुईं। इस विजय से जापान का समुद्र पर राज्य हो गया। जापानी सेनायें कोरिया के चेमल्पो और दूसरे बन्दरगाहों में बेधड़क होकर उतरने लगीं। इतना हो जाने पर भी अभी तक युद्ध घोषित नहीं हुआ था। १० फरवरी को रूस ने और ११ फरवरी को जापान ने युद्ध घोषित किया। युद्ध तेज़ी से बढ़ा। जापानी सेना ने बिना किसी

प्रतिरोध के सिउल पर अधिकार कर लिया। फिर जापानी सेना उत्तर की ओर बढ़ी। २८ फरवरी को प्रथम वार स्थल युद्ध प्येगयांग के पास हुआ। रूसी सेना की संख्या बहुत कम थी। जापानियों ने इसे बड़ी आसानी से भगा दिया। ४ अप्रैल को यालू नदी के किनारे पर कोरिया की ओर स्थित वीजू नगर पर अधिकार कर लिया। १ मई को यालू नदी का युद्ध हुआ। बीजू के पास यालू नदी कई धाराओं में बट जाती है। प्रधान धारा बीच में है। उत्तर की ओर पहाड़ियां और दूसरी पहाड़ी धारायें हैं। रूसी सैनिक इन्हीं पहाड़ियों और धाराओं की आड़ में छिपे हुये थे। प्रधान धारा ५०० गज़ और सहायक धारायें सवा सौ गज़ चौड़ी थीं। इनको पार करके दूसरे किनारे पर छिपे हुये शत्रु से मोर्चा लेना जापानियों के लिये सुगम न था। रूसी तोपचियों को धाराओं की दूरी का पूरा पता था। अतः दिन के समय इन्हें पार करना तो कठिन था ही रात्रि के समय भी वे गोले छोड़ सकते थे। बिना पुल बनाये जापानी तोपें नदी के उस पार नहीं जा सकतीं थी। जापानी अफसरों ने तैर कर धाराओं की

गहराई और पुल बनाने योग्य स्थानों का पता लगाया। कई अफसर इस कार्य में मारे गये। २७ अप्रैल की रात्रि में बीजू से प्रायः दो मील की दूरी पर नावों के पुल का बनना आरम्भ हुआ। प्रातः काल तक पुल बन कर तयार हो गया। २८ अप्रैल को दिन में रूसियों ने नावों पर गोले छोड़े पर कोई विशेष हानि नहीं हुई। २६ अप्रैल को भारी जापानी तोपें कोंकटोंटो द्वीप में पहुँच गईं। यहां जापानियों ने उन्हें लताओं से भली-भांति छिपा दिया। साधारण तोपों के लिये दूसरे स्थान पर पुल बनाना पड़ा यहां नदी दो गज़ गहरी थी। पानी बरफ के समान ठंडा था। यह पुल २५ अप्रैल की रात्रि को बनाया गया। ७ मनुष्य ठंड से सुन्न पड़ गये थे। ३ घंटे में उन्हें होश आया और वे फिर काम में लग गये। दिन के समय यहां भी रूसियों ने गोले छोड़े। प्रधान नदी की धारा अधिक तेज़ थी। इस पर पुल बनाना और कठिन था। पर जापानियों ने छोटी बड़ी धाराओं को मिला कर सेना उतारने के लिये १२ पुल बना डाले। इस युद्ध में जापानियों ने अनुमान लगाया कि अधिक से अधिक ५००० मनुष्य घायल होंगे उनकी इलाज़ के लिये उन्होंने डाक्टरों का प्रबन्ध किया। उन्हें

अपनी विजय का पूरा भरोसा था। ऐसा ही हुआ। जापानी सेना ने बड़ी सावधानी और गुप्त रीति से यालू नदी को पार कर लिया। उनकी भारी तोपें भी उस पार पहुँच गईं। रूसी सेना १८ मील तक पहाड़ियों पर फैली हुई थी। पर जापानी लोग इतने अलग अलग स्थानों पर उतरे कि रूसियों को यह पता न लग पाया कि सेना का प्रधान भाग किस स्थान उतरेगा। जिस स्थान पर जापानियों ने प्रधान भाग के उतरने का भास कराया वहां केवल कुछ ही भाग था। रूसियों को इसका विश्वास न हुआ कि जापनियों की नावें नदी पार कर सकेंगी। पर जब रूसियों ने गोले छोड़े तो उत्तर में जापानियों ने गोलों की ऐसी वर्षा की कि पहाड़ियों पर धुआं और धूल के बादल छा गये। कुछ समय तक तो रूसियों ने गोलों का उत्तर गोलों से दिया फिर सन्नाटा छा गया। १ मई को यालू के युद्ध में जापानियों की पूर्ण विजय हुई। विजयी जापानी सेना ने तेज़ी से मंचूरिया में प्रवेश किया। ३ मई को जापानी जल सेना ने पार्ट आर्थर के बन्दरगाह को घेर लिया। ५ मई को एक जापानी सेना पित्सेवो में उतरी। १६ मई को जापानी सेनापति नोदज़ू

की सेना ताकूशान के समीप आ गई। १४ मई को जापानी सेना दक्षिणी मंचूरियन रेलवे को पार कर गई। इसने पोर्ट आर्थर को उत्तर की रसद और रूसी सैनिक अड्डे से अलग कर दिया। २३-२६ मई को नानशान पहाड़ी की भीषण लड़ाई हुई। जापानी सेना ने स्थल संयोजक पर अधिकार करके पोर्ट आर्थर को दूसरे रूसी सैनिक केन्द्रों से एक दम अलग कर दिया।

जापानी सेनापति नोगी ने १५ जून को पार्ट आर्थर का घेरा आरम्भ कर दिया। जापानी सेनापतियों की भिन्न-भिन्न रणक्षेत्रों में तो विजय हो रही थी। पर संसार की दृष्टि पोर्टआर्थर पर लग रही थी। इसे अजेय बनाने में रूसियों ने कोई कमी नहीं की थी। पोर्टआर्थर को नंगी सपाट पहाड़ियों से घिरा कर प्रकृति ने ही बलवान बनाया था। रूसियों ने ५२ किले और तोप रखने के स्थान यहां बना दिये थे। इन किलों से सुरक्षित पोर्ट आर्थर की रूसी सेना को हथियार और रसद की भी कमी न थी। रूसी लोग लड़ने में बड़ा साहस दिखलाते हैं। पर जापानी सिपाही मृत्यु से कुछ भी नहीं डरते थे। यही नहीं वे अपने सम्राट के लिये मरने में बड़ा सम्मान और अभिमान समझते थे। किले के ऊपर से

रूसी पैदल सैनिक और तोपची यदि एक जापानी टोली को गोलियों की वर्षा से भस्म कर देते तो दूसरी टोली तुरन्त इसके स्थान पर वहीं पहुँच जाती और युद्ध जारी रहता। इस लड़ाई में बिजली का प्रथम बार प्रयोग हुआ। रात को ऐसा प्रकाश रहता कि अचानक अँधेरे में किले पर चढ़ाई करने की सम्भावना न रही। तोपों को ऊँचा नीचा करने और गोले छोड़ने का काम बिजली से होता था। चारों ओर काँटेदार तारों में बिजली दौड़ा दी गई थी। यदि कोई सिपाही इन बिजली भरे तारों को छूता तो तुरन्त मर जाता। किलों के भीतर महराब भाप में बिजली से गाड़ियां चलती थीं। यदि किसी स्थान पर सेना की आवश्यकता पड़ती तो यह गाड़ियां तुरन्त सैनिक सहायता पहुँचा देती। सेनापति के प्रधान स्थान पर टेलीफोन का अड्डा था। यहां से समस्त रण-क्षेत्र के लिये तार की शाखायें गई थीं। टेलीफोन द्वारा ही सेना को आज्ञा दी जाती थी। घोड़ा दौड़ा कर हरकारा भेजने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। एक युद्ध पोत को बनाने में कई वर्ष लगते हैं और कई करोड़ रुपये खर्च होते हैं। अतः जापानी जहाज़ इतनी

दूरी पर पड़े हुये थे कि छोड़े हुये रूसी तोपों के गोले उन तक नहीं पहुँच पाते थे। जापानी छोटी छोटी टार्पीडो नावों और जहाज़ों के तोपचियों को गोले छोड़ने की दूरी और दिशा का आदेश बिना तार के तार (वायरलेस) से दिया जाता था। रूसी लोग छोटी छोटी जापानी टार्पीडो नावों को नहीं देख पाते थे और न इन पर गोले छोड़ पाते थे। यह नावें कई मील दूर पड़े हुये जहाज़ों को सूचना देती रहती थी कि गोला किस स्थान पर छोड़ा जाय। पर गोलाबारी दिन रात होती रहती। जापानी सेना की टोलियां खाइयां खोद कर और इन खाइयों की आड़ में ठहर कर किले की पत्थर की दीवारों भारी तोपों और मशीन गनों पर आक्रमण करतीं। लगातार महीनों के आक्रमण से व्याकुल होकर १९०५ ई० को दूसरी जनवरी को विशाल रूसी किले ने आत्म-समर्पण कर दिया। आत्मसमर्पण के समय किले में केवल एक चौथाई सिपाही शेष रह गये थे। उनमें भी अधिकांश घायल और बीमार थे। जनरल नोगी ने १३२३ रूसी अफ़सर २५,०११ सिपाहियों को कैद कर लिया। ६ लाख मनुष्यों के लिये एक बार का आटा, पाव रोटी, जौ का दालिया ४०० मन शक्कर, पौने दो लाख मांस से

भरे हुए टीन के डब्बे ८०० मन नमक जापानियों के हाथ लगा। इस रसद के अतिरिक्त ५८८ तोपें अनेक छोटी बड़ी बन्दूकें और गोलियां उन्हें मिलीं। ६ महीने की लड़ाई में पोर्ट आर्थर में रूसियों के ४५,००० सिपाही मरे या घायल हुये। रूसी वीर मृतकों के सम्मानार्थ जापानियों ने पोर्ट आर्थर में एक स्मारक बनवाया।

ल्याओ का युद्ध कुछ दिन तक भीषणता से चला। इतने में शीतकाल आरम्भ हो गया। दोनों सेनायें थक कर अपनी अपनी ओर शीत से बचने के लिये छिप गई। एक बार डेढ़ लाख सेना लेकर जब रूसियों ने जापानियों पर छापा मारा तो १२००० रूसी और ५००० जापानी मारे गये। मंचूरिया की ठंड रूसी लोग भली भांति सह सकते थे पर जापानियों को बड़ी विक-राल मालूम पड़ती थी। पर जापानियों को यह भी डर था कि वसन्त के आते ही बरफ के पिघलने से मैदान में अथाह कीचड़ हो जायगी। अतः पोर्ट आर्थर को जीत कर जनरल नोगी की सेना जैसे ही उत्तर की ओर आई वैसे ही जापानी सेनाओं ने आक्रमण आरम्भ

कर दिया। १६१४ ई० के मुकडन का युद्ध पूर्व संसार का सब से बड़ा युद्ध कहा जा सकता है। इस युद्ध में १० लाख सिपाही लड़ रहे थे। युद्ध पंक्ति १०० मील लम्बी थी। लड़ाई १७ दिन (२४ फर्वरी से १२ मार्च) तक लगातार होती रही। अन्त में जापान की विजय हुई। इस लड़ाई के अन्त में समस्त कोरिया और निचले मंचूरिया पर जापान का अधिकार था। पर उन्होंने अधिक उत्तर की ओर बढ़ना उचित न समझा। वे अपने रसद के अड्डों से बहुत दूर हो जाते।

रूस ने समुद्र के अन्तिम युद्ध के लिये अपना जहाज़ी बेड़ा अक्तूबर मास में यारुप से भेजा। पर इन लोगों पर आरम्भ से ही जापान का आतङ्क छाया हुआ था। बाल्टिक सागर के एक स्थान पर मछली मारने वालों को इन्होंने जापानी समझ कर इन पर गोली छोड़ दीं।

जापानी जल सेना मसाम्पो के समीप कोरिया के दक्षिणी तट पर पड़ी थी। हज़ारों जापानियों को इसका पता था। पर उनमें ऐसी देश भक्ति थी कि रूसी बेड़े के जापानी बेड़े का कुछ भी पता न लगा जब रूसी बेड़ा उत्तरी प्रशान्त महासागर के समीप पहुंचा तो उसने सोचा

कि जापानी जल सेना उसकी प्रतीक्षा में तीन प्रणालियों पर तीन भागों में बटी होगी। चूंकि कोरिया प्रणाली व्लाडीवोस्टक से सबसे अधिक दूर है इस लिये इधर सब से कम जापानी बेड़ा होगा। पर हुआ उलटा। जापानियों ने रूसी बेड़े की सूचना पाने के लिये बड़ी तयारी की थी। थोड़ी थोड़ी दूरी पर सिगनल देने का प्रबन्ध था। समुद्र को भी उन्होंने टोलियों में बांट लिया था। २७ मई शनिवार को सूचना मिली कि शत्रु का बेड़ा २०३ नम्बर के समुद्र में क्वेलपार्ट द्वीप के पास देखा गया। जनरल टोजो ने बेड़े को युद्ध के लिये तयार होने की आज्ञा दी। रूसी बेड़े को अब तक जापानी बेड़े का पता न था। उसे इस बात की प्रसन्नता थी कि व्लाडीवोस्टक निकट है। अचानक दो जापानी युद्ध पोत एक द्वीप के उत्तरी सिरे पर दिखाई दिये। युद्ध आरम्भ हो गया। रूसी निशाना ठीक नहीं बैठता था पर चार मील की दूरी से जापानी ऐसा गोला छोड़ते थे कि कोई निशाना खाली नहीं जाता था। जापानी जहाज़ इतने तेज थे कि उनके पास पहुंचना कठिन हो गया। वे रूसी जहाजों का चक्कर लगा कर दूर से ही गोले मार चकनाचूर कर

देते। रूसी जहाज़ कुहरे में उन्हें देख भी नहीं पाते थे। दिन के दो बजे युद्ध आरम्भ हुआ। ३७ मिनट में रूस के ६ युद्ध पोत नष्ट हो गये। शेष समय जापानियों ने इधर उधर बिखरे हुये रूसी जहाज़ों को खदेड़ने और नष्ट करने में लगाया। ३० घन्टे के भीतर रूसी जल सेनापति घायल होकर जापानियों का बन्दी हो गया। रूसी बेड़े के ३८ जहाज़ों में चार को छोड़ कर शेष पकड़ लिये गये अथवा नष्ट कर दिये गये। इन चार में केवल एक भाग कर व्लाडोवोस्टक पहुंच सका। ३ मनिल्ला की खाड़ी को लौट गये। जापान की इस शानदार समुद्री विजय से संसार दङ्ग रह गया। इस युद्ध में जापान की केवल ३ टार्पीडो नावें डूबी थीं। उनके ३ गश्ती जहाज़ों को कुछ क्षति पहुँची थी। उनके केवल ११६ मनुष्य मरे और ३८ घायल हुये।

इस समय जापान का क्षेत्रफल डेढ़ लाख वर्ग मील और जन संख्या ५ करोड़ थी। रूस का क्षेत्र फल ८६,५०,००० वर्ग मील और जनसंख्या १५ करोड़ थी। इतनी बड़ी शक्ति से भिड़ना जापान के लिये आरम्भ में पागलपन था। पर जापान अपने घर के पास लड़ रहा था। सहज ही किसी मार्के के स्थान पर पूरी शक्ति लगा

सकता था। रूस के लिये यह रणक्षेत्र ५ हजार मील से अधिक दूर था। जब जापान ने रूसी बेड़े को पोर्ट आर्थर में घेर लिया तब रूस के लिये रसद पाने का केवल एक मार्ग ट्रान्स साइबेरियन रेल का रह गया। यह इक-हरी लाइन ५ हजार मील से अधिक लम्बी है। इस समय बैकाल झील के पास भारी रूकावट थी। झील के दोनों किनारों पर रेल रुक जाती थी। सामान और सिपाही स्टीमर द्वारा दूसरे किनारे पर पहुँचाये जाते थे। इसमें समय अधिक लगता था। योरुप में भी रूस के बहुत से शत्रु थे। अतः रूस अपनी सारी सेना और जहाजी बेड़ा इधर भेज भी नहीं सकता था। रूसी सेना में एकता न रह सकी। लड़ाई के समय में तीन बार प्रधान सेनापति बदले गये। योरुप से आने वाली रेलगाड़ियों में सैनिक सामान के बदले वोड का (शराब) अधिक रहती थी। रूसी सैनिकों के पड़ावों में भोग विलास बहुत था। रूसी सिपाही वीर और साहसी अवश्य था। पर उसे अपने उद्देश्य का पता न था। जापानी जी जान से अपने अपने देश जाति और राजा की रक्षा के लिये लड़ रहे थे। इस हार से रूस की शान मिट्टी में मिल

गई। जापान इस विजय से समस्त एशिया के लिए एक चमकता हुआ तारा बन गया। इससे पहले एशिया वासियों में निराशा थी। वे गोरों को अजय समझते थे। जापान की विजय से उनमें अचानक आशा की झलक आ गई। उनमें साहस भर गया। उनमें विश्वास हो गया कि यदि छोटे से जापानी, शक्तिशाली रूस को हरा सकते हैं तो वे भी अपने देश से दूसरे गोरों को भगा कर स्वाधीन हो सकते हैं।

सन्धि

दोनों पक्ष लड़ाई से थक गये थे। प्रशान्त महासागर में रूस की जल सेना नष्ट हो गई थी। ट्रान्स साइबेरियन रेल के मार्ग से पर्याप्त सहायता नहीं आ सकती थी। ६४,००० रूसी सिपाही अस्पताल में थे। रूसी सेना में कुछ फिन, पोल और रूस के राजविद्रोही सिपाही थे। जो वास्तव में रूस से जलते थे जिन्हें रूसी सरकार ने यहां कटवाने के ही लिये भेजा था। विजयी होने पर भी जापान सन्धि के लिये आतुर था। जापान में लड़ाई के कारण कर पहले से तिगुने हो गये थे। युद्ध के

अधिक बढ़ने से यह भार और अधिक बढ़ जाता। मंचूरिया में इस समय भी साढ़े पांच लाख रूसी सिपाही थे। योरुप की गोरी शक्तियों के मिल जाने का भी जापान को डर था। फिर भी सन्धि की वार्ता छेड़ने के के लिये दोनों शक्तियों में से कोई तयार न था।

अन्त में संयुक्तराष्ट्र अमरीका के राष्ट्रपति रूज़वेल्ट ने दोनों विरोधी शक्तियों को पत्र लिखा कि सभ्यता की रक्षा के लिये क्या ही अच्छा हो कि दोनों राज्य सन्धि की बातचीत करने के लिये तयार हो जावें। जापान ने तुरन्त स्वीकृति दी। रूस राज़ी हो गया। संयुक्त राष्ट्र अमरीका के पोर्टस्मथ (न्यू हैम्पशायर) स्थान में रूस और जापान के प्रतिनिधि सन्धि वार्ता के लिये एकत्रित हुये। ८ अगस्त को जापानी प्रतिनिधि ने लिखित १२ शर्तें पेश की। रूसी प्रतिनिधि ने कुछ शर्तों का घोर विरोध करना आरम्भ किया। यह निश्चित हुआ कि जिन शर्तों पर मत भेद हो उन्हें बाद में छेड़ा जाय। जो शर्तें स्वीकार हों उन्हें पहले लिया जाय। रूसी प्रतिनिधियों ने ८ शर्तें स्वीकार कर लीं। शेष चार शर्तों पर कड़ा मत भेद था। एक दो बार ऐसा प्रतीत

हुआ कि कहीं सन्धि वार्ता ही भंग न हो जाय। अन्त में जापानी प्रतिनिधियों ने तीन शर्तें छोड़ दीं। इससे सब को बड़ा हर्ष हुआ और सन्धि वार्ता सफल हो गई। दोनों देशों के प्रतिनिधियों ने अपनी अपनी सरकार के हस्ताक्षर के लिये १४ अक्तूबर का सन्धि पत्र टोकियो और सेन्टपीटर्स बर्ग को भेजा।

सन्धि की उल्लेखनीय बातें यह थीं। जापान ने रूस के इस पट्टे को मान लिया जिसके अनुसार रूसी रेलवे की शाखा (ट्रंक) लाइन में मंचूरिया होकर ब्लाडीवोस्टक को गई थी। रूस ने कोरिया में जापान के विशेष प्रभाव को मान लिया मंचूरिया के शासन में हस्तक्षेप करना छोड़ दिया। केवल मंचूरियन रेलवे में पुलिस के सिपाही रखने से सन्तोष कर लिया। क्वांगचेग्त्से दर्रे से पोर्ट आर्थर तक पूर्वी चीनी रेलवे जापान को सौंप दी गई। पोर्ट आर्थर और डाल्नी जापान को दे दिये गये। ५० अक्षांश से दक्षिण की ओर साखालियन द्वीप का दक्षिणी आधा भाग भी जापान को दे दिया गया। मंचूरिया को खाली करना दोनों देशों ने स्वीकार कर लिया। इस सन्धि से कोरिया और मंचूरिया से रूसी प्रभाव उठ गया। १८७५ ई० में जब जापान ने साखालियन

द्वीप रूस को दे दिया था। उस समय इस द्वीप का वास्तविक महत्व नहीं समझा गया था। साखालियन द्वीप ६७० मील लम्बा है। इसका क्षेत्रफल २५००० वर्ग मील है। इसके दक्षिणी भाग में विशाल बन कोयले लोहे की खाने और मिट्टी के तेल के चश्मे हैं। इसकी नदियों और समुद्र में मछलियों की भरमार है। यह एशिया के प्रधान स्थल से केवल २५ मील दूर है। जापान से यह ३० मील दूर है। उत्तरी भाग ठंढा बर्फीला और उजाड़ है। पर यह अमूर नदी के मुहाने के सामने है। और उसकी पहरेदारी करता है। इसी प्रकार दक्षिणी भाग जापान के लिये सैनिक महत्व रखता है। यह लापे-रूज प्रणाली की रखवाली करता है। दक्षिणी भाग में क्यूरोशिवो धारा का प्रभाव पड़ता है। इसलिये इसकी जलवायु उत्तम हो जाती है।

जापान और इंगलैंड की गुप्त सन्धि ने इस सन्धि के करने में बड़ी सहायता दी। यह सन्धि १० वर्ष के लिये हुई। इस सन्ध के अनुसार कोरिया में जापान के राजनैतिक सैनिक और आर्थिक स्वार्थ इंगलैंड ने मान लिये। भारतवर्ष और उसको

सीमा के समीप ब्रिटेन का प्रभुत्व स्वीकार कर लिया गया। यदि इन दोनों में कोई तीसरी शक्ति चढ़ाई करे तो दोनों शक्तियां मिल कर युद्ध करें। इसके अनुसार रूस न मंचूरिया की ओर बढ़ सकता था न भारतवर्ष की सीमा के पास आ सकता था। इस सन्धि ने १६१४ की लड़ाई में ब्रिटेन को निश्चिन्त रक्खा। लड़ाई के समाप्त होने पर रूस में ज़ारशाही का अन्त हो गया। उधर इंगलैंड ने अमरीका को मिलाने में अधिक हित देखा। इसी से इस गुप्त सन्धि का अन्त हो गया।

कोरिया की दासता

१८६४ ई० में कोरिया एक स्वतन्त्र राज्य था। चीन और जापान दोनों ही ने कोरिया को स्वाधीन रखने के लिये आग्रह किया था। १८६५ के अक्तूबर मास में ऐसा षड्यन्त्र रचा गया जिससे कोरिया का सम्राट ऊपर से स्वतन्त्र होने पर भी जापानी दल की कठपुतली बन गया। फिर उसने भाग कर एक वर्ष रूसी दूतावास में बिताया। १८६७ ई० में कोरिया के राजा ने सम्राट की उपाधि धारण कर ली। १६०४ ई० की

सन्धि के अनुसार जापान शासन प्रबन्ध में सम्मति दाता बन गया। फिर भी कोरिया की स्वाधीनता और अविच्छिन्नता जापान ने स्वीकार कर ली। जापान ने वचन दिया कि कोरिया का राजवंश पूर्ववत्-शासन करता रहेगा। रूस-जापान युद्ध के पश्चात रूस ने कोरिया में जापान का विशेष प्रभाव अथवा दूसरे शब्दों में प्रभुत्व मान लिया। एक गुप्त सन्धि के अनुसार १९०५ ई० के १२ अगस्त को ब्रिटेन ने कोरिया में जापान के विशेष अधिकार मान लिये। जब संसार की दो महाशक्तियों ने जापान को कोरिया में मनमानी करनी की स्वीकृति दे दी तो जापान ने इस दिशा में और भी अधिक तेज़ी से बढ़ना आरम्भ किया।

एक सन्धि का मस्विदा कोरिया के सम्राट के सामने पेश किया गया। इसके अनुसार सम्राट की मातहती में कोरिया का एक जापानी शासक नियुक्त हो। सभी ट्रीटी पोर्ट (सन्धि वाले विदेशियों के लिये खुले बन्दरगाहों) में जापानी शासक नियुक्त हों। कोरिया का राजनैतिक बिभाग टोकियो चला जाय। यह १७ नवम्बर १९०५ की सन्धि कहलाती है। कोरिया के सम्राट ने

इसका घोर विरोध किया पर आधी रात को उसके हस्ताक्षर करवा लिये गये। २६ जनवरी को कोरिया के सम्राट ने कोरियावासियों के सामने एक अपील की और कहा कि वे कोरिया को दासता से बचाने का प्रयत्न करें। जब लोगों को इस सन्धि का पता लगा तो देश में बड़ी सनसनी फैली। राज्य के छः उच्च पदाधिकारियों और अनेक साधारण देश भक्त कोरिया वासियों ने आत्महत्या कर ली। स्थान स्थान पर कोरिया वासियों की भीड़ इकट्ठी होकर चिल्लाने और बाल नोचने लगी। पर जनता को दबा दिया गया। कोरिया में जापान के सर्वेसर्वा युवराज ईटो ने सान्त्वना दी इस सन्धि से कोरिया का राजवंश और शासन प्रबन्ध अविच्छिन्न रहेगा। जापान के इस सम्बन्ध से कोरिया के राजवंश की शान बढ़ जायगी।

कोरिया के सम्राट को इस सान्त्वना से कुछ भी सन्तोष न हुआ। पर वह विवश था। उसने सोचा कि अमरीका की सहायता से शायद कोरिया बच जावे। इस उद्देश्य से उसने सिउल के सरकारी स्कूल के प्रधान हल्बर्ट नाम के एक अमरीकन को व्यक्तिगत अपील करने के लिये अमरीका के राष्ट्रपति रूज़वेल्ट के पास भेजा। पर रूज़वेल्ट साहब ने उनसे भेंट ही न की।

सम्राट ने एक तार भेजा उसका भी कुछ फल न हुआ। कोरिया वासियों को अमरीकनों से बड़ी आशा थी। सिउल का एक अमरीकन मंत्री कोरिया वासियों से कुछ सहानुभूति रखता था वह भी बुला लिया गया। यही नहीं जापान के संकेत से संयुक्त राष्ट्र अमरीका ने सिउल से अपना दूतावास ही उठा लिया। इस प्रकार विदेशियों में अमरीका ने सर्व प्रथम संसार को यह प्रदर्शन किया कि कोरिया का विदेश विभाग अब कोरिया में नहीं रहा वरन् यह टोकियो चला गया। कई वर्ष बाद रूज़वेल्ट साहब ने खुल कर कहा—"कोरिया देश एक दम जापान का हो चुका। जब कोरिया वासी अपने देश के लिये कुछ नहीं कर सके तो कोई दूसरा देश जिसका कोरिया में कोई स्वार्थ नहीं है क्या कर सकता है। अनुकूल समय देख कर जापान ने सन्धि पत्र फाड़ डाला और चुपचाप कोरिया पर अधिकार कर लिया।"

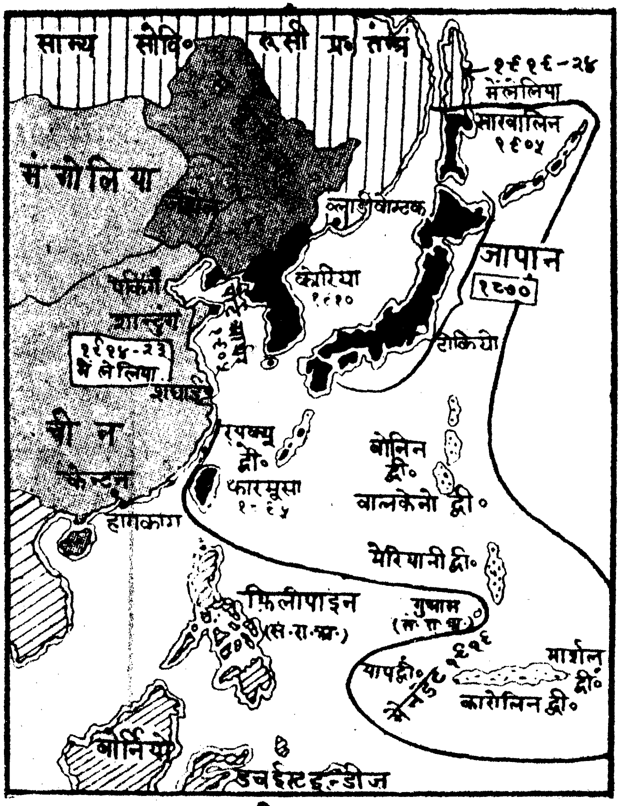
१६०७ ई० में कोरिया के सम्राट ने एक प्रतिनिधि मंडल हेग के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में भेजा और पश्चिमी शक्तियों से प्रार्थना की कि वे कोरिया की सहायता करें।

हेग के कमिश्नरों ने भी कोरिया के प्रतिनिधियों से भेंट नहीं की। पर इससे जापान बड़ा रुष्ट हो गया। उसने अपने पिट्ठू मन्त्री कोरिया के सम्राट के पास भेजे। उन्होंने सम्राट से प्रार्थना की कि कोरिया का हित इसी में है कि आप सिंहासन छोड़ दें। पहले सम्राट को बड़ा क्रोध आया। कुछ डर भी लगा। पर अन्त में विवश होकर उसने सिंहासन छोड़ दिया। उसका बेटा युवराज कोरिया की गद्दी पर बिठाया गया। इस समाचार को पाते ही भीड़ ने क्रुद्ध होकर राजमहल को घेर लिया। पर जापानी सेना ने भीड़ को शीघ्र ही छिन्न भिन्न कर दिया। कुछ ही समय में कोरिया एक मन्त्री यी वान युंग को मोल लेकर जापान ने सम्राट के नाम से दूसरी सन्धि कर ली। इसके अनुसार कोरिया का शासन प्रबन्ध जापान के हाथ में चला गया। बिना जापानी अनुमति के कोरिया कोई कानून न बनावे न किसी विदेशी को रक्खे। नये सम्राट से घोषणा करवाई गई कि कोरिया की सेना छिन्न भिन्न हो जावे। कोरिया के कुछ सिपाहियों ने इसका विरोध भी किया पर उनके हथियार छीन लिये गये। इस प्रकार कोरिया, की सेना का अन्त हो गया। १९१० ई० में जापान ने कोरिया

को खुल्लम खुल्ला अपने राज्य में मिला लिया। इस प्रकार एक प्राचीन देश की स्वाधीनता का चिरकाल के लिये अन्त हो गया। नये सम्राट और उसके पिता को पेंशन देकर अलग कर दिया गया। कोरिया वासी कुछ गुप्त और कुछ खुल्लम खुल्ला संस्थायें बना कर देश को स्वाधीन करने का प्रयत्न करते रहे। पर अभी तक उन्हें इस कार्य में सफलता नहीं मिली। १९१९ ई० में कोरिया के सम्राट की मृत्यु हो गई। कोरिया वासियों ने जलूस निकाले। देशभक्ति प्रगट की। जापानी पुलिस ने गोलियां चलाई। पर अन्त में जापान ने दूसरा गवर्नर भेजा।

अगस्त १९४५ ई० तक कोरिया पर जापान का शासन रहा। सितम्बर में जापान के आत्मसमर्पण करने पर कोरिया से जापान का प्रभुत्व उठ गया। रूस और अमरीका के सम्मिलित निरीक्षण में कोरिया में एक स्वतन्त्रराष्ट्र बनने की आशा है।




साम्य सोवि० रूसी प्र० तन्त्र
१९१९-२४
में ले लिया
सारवालिन
१९०५
मंगोलिया
ब्लाडीवोस्टक
जापान
१८७०
कोरिया
१९१०
पेकिंग
शान्टुंग
१९१४-२२
में ले लिया
टोकियो
शंघाई
चीन
रयूक्यू
द्वी०
बोनिन
द्वी०
कैन्टन
फारमूसा
१८९५
वालकेनो द्वी०
हांगकांग
मेरियानी द्वी०
फिलीपाइन
(स०रा०अ०)
गुआम
(स०रा०अ०)
मार्शल
द्वी०
यापद्वी०
कारोलिन द्वी०
बोर्नियो
डच ईस्ट इन्डीज

जापानी साम्राज्य



धान की कुटाई।



कोरिया में ज्वार के खेत।



बाज़ार का एक दृश्य।



परदार गेंद का खेल।



लकड़ी के पैर लगा कर चलना।



कोड़े से लट्टू उछाला जा रहा है।



बरफ पर फिसलने का खेल।



जाड़े में पतंग उड़ाना ।



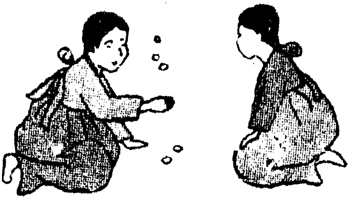
जमीन पर लकड़ी लड़ाने का खेल ।



आधी आधी पत्तियां पांसे या चौपड़ का काम देती हैं ।



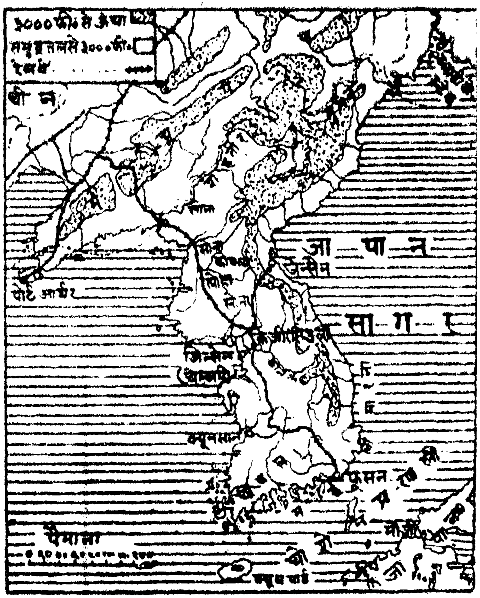
आंख मिचौनी का खेल ।



पत्थरों के छोटे छोटे टुकड़े गेंद का काम देते हैं ।



दोनों पैरों को एक साथ उछालकर हाथों से नीचे रस्सी निकालने का खेल ।


चीन
पोर्ट आर्थर
जापान
सागर
गेन्सैन
फ्यूसन
पैमाना